योगविद्या

वर्ष 13 अंक 4
अप्रैल 2024

बिहार योग विद्यालय, मुंगेर, बिहार, भारत

हरिः ॐ

योगविद्या का सम्पादन, मुद्रण और प्रकाशन स्वामी सत्यानन्द सरस्वती के संन्यासी शिष्यों द्वारा स्वास्थ्य लाभ, आनन्द और प्रकाश प्राप्ति के इच्छुक व्यक्तियों के लिए किया जाता है। इसमें बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट तथा योग शोध संस्थान के क्रियाकलापों की जानकारियाँ प्रकाशित की जाती हैं।

सम्पादक – स्वामी ज्ञानसिद्धि सरस्वती

योग विद्या मासिक पत्रिका है।

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर, 811201, बिहार, द्वारा प्रकाशित।

थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, फरीदाबाद, 121007, हरियाणा में मुद्रित।

© Bihar School of Yoga 2024

उपयोगी संसाधन

वेबसाइट :

www.biharyoga.net
www.sannyasapeeth.net
www.satyamyogaprasad.net

एप्प : (Android एवं iOS उपकरणों के लिए)
Bihar Yoga
APMB
YOGA (अंग्रेजी पत्रिका)
YOGAVIDYA (हिन्दी पत्रिका)
FFH (For Frontline Heroes)

कुल पृष्ठ संख्या : 56 *(कवर पृष्ठों सहित)*

कवर एवं अन्दर के प्लेट:
मुंगेर योग संगोष्ठी 2023 –
5 नवम्बर, द्वितीय दिवस

आध्यात्मिक मार्गदर्शन

आप जैसा सोचते हैं, वैसे ही बन जाते हैं – यह सूक्ति सत्य और सही है। आप अपने को स्वस्थ मानें, आप स्वस्थ बन जायेंगे। आप अपने को दुर्बल मानें तो दुर्बल बन जायेंगे। आप अपने को विद्वान्, महात्मा या परमात्मा मानें, तो वैसे ही बन जायेंगे।

विचारों से ही मनुष्य बनता और बिगड़ता है। हर व्यक्ति का अपना एक वैचारिक जगत् होता है, जिसमें वह निवास करता है। संकल्प में अद्भुत शक्ति है, आप इससे आश्चर्यजनक काम कर सकते हैं। आपने भूतकाल में जैसा सोचा था, आज आप उसी का मूर्त्त रूप हैं। आज जो कुछ आप सोच रहे हैं, आपका भविष्य उसी से बन रहा है।

– श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर–811201, बिहार के लिए स्वामी शिवध्यानम् सरस्वती द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित
मुद्रक – थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, 18/35 माइलस्टोन, दिल्ली मथुरा रोड, फरीदाबाद–121007, हरियाणा
स्वामित्व – बिहार योग विद्यालय **सम्पादक** – स्वामी ज्ञानसिद्धि सरस्वती

योगविद्या

वर्ष 13 अंक 4 अप्रैल 2024
(प्रकाशन का 62 वाँ वर्ष)

विषय सूची

4 योग की योजना
13 उड़ जा पंछी मौत से दूर
15 स्वान सिद्धांत
24 आंध्र प्रदेश में आध्यात्मिक अभियान
26 कर्मयोग साधना
32 योग की संभावनाएँ
41 सत्यानंद योग अकादमी – कोलोम्बिया
44 सच्चा शिष्यत्व
49 बिहार योग क्लब – सर्बिया
51 कज़ाकिस्तान योग अकादमी

तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः। कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन॥

योग की योजना

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

मन पर विजय पाने की यौगिक योजना सुव्यवस्थित और वैज्ञानिक तरीके से आगे बढ़ती है। यह पहले स्थूल, और फिर सूक्ष्म मानसिक अभिव्यक्तियों को नियंत्रित करती है। योग के यम दुर्गुणों का निर्मूलन करके सद्गुणों का विकास करते हैं। यौगिक नियम साधक की आदतों और व्यवहारों को नियमित करते हैं। दुर्गुणों और नकारात्मक आदतों का दास बनने के बजाय अब साधक अपने व्यवहार को नियंत्रित कर दृढ़ संकल्प द्वारा सद्गुणों और सकारात्मक आदतों को विकसित करता है।

शारीरिक हलचल की स्वाभाविक प्रवृत्ति को, अनियंत्रित और निरुद्देश्य शारीरिक गति को आसनों के अभ्यास द्वारा रोका जा सकता हैं। इस अभ्यास से कालान्तर में व्यक्ति के चरित्र का विकास होता है, सद्गुणों का अर्जन होता है और पुरानी आदतों की जगह पर नयी आदतें आ जाती हैं। शारीरिक क्रियायें नियमित और नियंत्रित हो जाती हैं। मन की चंचलता श्वास द्वारा नियंत्रित की जाती है और इस प्रक्रिया को प्राणायाम कहते हैं।

हाँलाकि इस प्रक्रिया से विचार रुक जाते हैं, फिर भी इच्छाएँ और वासनाएँ मन को उद्विग्न करती रहती हैं। इसके लिए योग का पाँचवां अंग प्रत्याहार है, जिसमें इंद्रियों को विषय-वस्तुओं से हटाकर मन को अंतर्मुखी किया जाता है।

प्रत्याहार साधक को यौगिक सोपान के छठे चरण, धारणा के लिए तैयार करता है। मन का एक बिन्दु पर एकाग्र होना धारणा है। अन्तर्मुखी मन किसी प्रतीक या लक्ष्य पर स्थिर हो जाता है। धारणा जब गहरी और लम्बी होती है तो ध्यान में परिवर्तित हो जाती है।

ध्यान में गहराई और निरंतरता के परिणामस्वरूप समाधि लग जाती है। यह असीम सत्ता से जुड़ने की आनंदमय अवस्था है, जो जन्म और मृत्यु के बन्धन से मुक्त कर देती है। यह सर्वोच्च अनुभव हमें अनेकता के पीछे दिव्य एकता देखने की दृष्टि प्रदान करता है। हमारे जीवन और कर्मों में परम सत्ता की ऊर्जा की सहज अभिव्यक्ति होने लगती है। हमारे कर्म ईश्वरीय योजना को उसकी गरिमामयी पराकाष्ठा तक ले जाते हुए विशुद्ध रूप से मानवता के कल्याण के लिए होते हैं।

दिव्य जीवन क्या है? दिव्य जीवन योग पर आधारित और वेदान्त की भावना से परिव्याप्त जीवन है। यह निःस्वार्थता, सेवा, आध्यात्मिक अभ्यासों और आत्म-ज्ञान से निर्मित है। योग और वेदान्त दिव्य जीवन के ताने-बाने हैं। इसके विषय में हमें जितनी अधिक जानकारी होती है, इसके महत्त्वपूर्ण पक्षों की समझ, स्मृति और अभिव्यक्ति जितनी अधिक होती है, हम अपने चयनित मार्ग पर आगे बढ़ने के लिए उतने ही तत्पर होते हैं। याद रखिये कि दिव्य जीवन के विषय में जानने के साथ-साथ उतना ही महत्त्वपूर्ण है उसे जीना।

योग और व्यावहारिक वेदान्त का जीवन जीने के प्रयास में हम अनेक बाधाओं का सामना करते हैं, और कई बार ऐसी परिस्थितियाँ आती हैं जिन्हें हमें बुद्धि और ज्ञान के द्वारा संभालना होता है। इसलिए इन विषयों की चर्चा और इनके गूढ़, सूक्ष्म तत्त्वों का ज्ञान हमें किसी भी परिस्थिति का प्रभावपूर्ण ढंग से सामना करने के लिए तैयार करेगा।

स्वयं को समझना

आप अपने ज्ञान, भक्ति, सेवा और योग को किस प्रकार अभिव्यक्त कर सकते हैं? अपने विचार, वाणी और कर्मों के माध्यम से। नारद भक्ति सूत्रों में भक्ति की व्याख्या शायद आपको उतना प्रभावित न करे, परन्तु कीर्तन, प्रार्थना, ध्यान और संतों की सेवा द्वारा आपको वह भक्ति सहजता से प्राप्त हो सकती है। भक्ति तभी अभिव्यक्त तब होती है जब यह हृदय में प्रकट होती है, अन्यथा विश्व के सारे शास्त्र किसी काम के नहीं रहते। साधना, वेदान्त और योग को हृदय में जीना है। ऐसा करने के लिए व्यक्ति को स्वयं को जानना आवश्यक है। व्यक्ति को सर्वप्रथम इस रहस्यमय धर्मक्षेत्र को, अपने हृदय और मन को समझना है।

यह महत्त्वपूर्ण क्यों है? आप जहाँ भी हैं, अपने आप से भाग नहीं सकते। यदि आप सोचते हैं कि निवृत्तिमय, आध्यात्मिक जीवन जीने में पारिवारिक बन्धन एक बड़ी बाधा है तो अपना परिवार छोड़ सकते हैं। आप अपने घर या शहर से भाग भी सकते हैं। यदि आप सोचते है कि कुछ लोगों की संगत अनुकूल नहीं है तो आप उनका साथ छोड़ सकते हैं। ठीक है, आप अपने परिवार से, अपने घर-शहर से और लोगों की संगत से दूर चले जाते हैं, परन्तु आश्चर्य की बात यह कि आप स्वयं से भाग नहीं सकते।

इसका तात्पर्य क्या है? आपको अपना पेट, अपनी इन्द्रियाँ, और साथ ही अपनी इन्द्रियों की आदतों को साथ लेकर चलना है। आपको अपने साथ

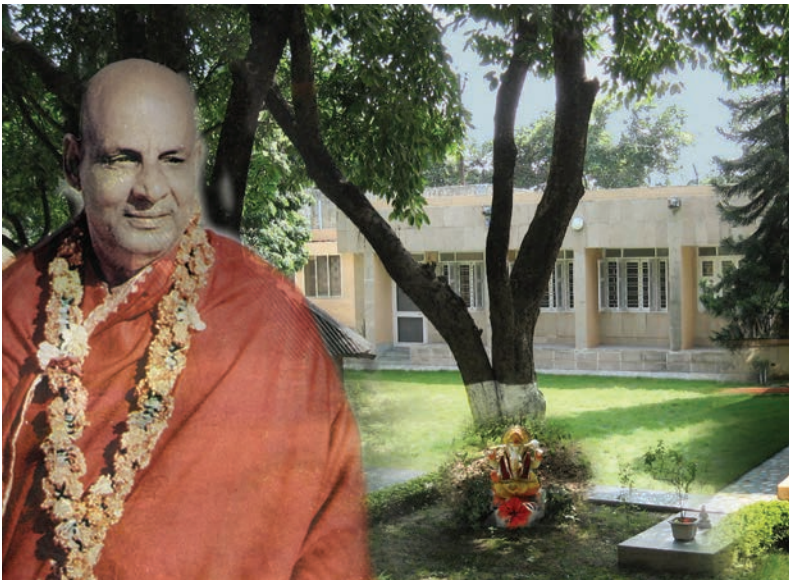

अपना शरीर लेकर चलना है, साथ ही राग-द्वेष, प्रेम-घृणा, आशा-निराशा से युक्त मन को भी साथ लेकर चलना है। चाहे आप उत्तर काशी में रहें या मुम्बई में, हिमालय की शान्ति में या किसी बड़े नगर के शोरगुल में, आपको हमेशा अपनी इन्द्रियों और मन को साथ लेकर चलना है। अगर आप नहीं जानते कि उनसे कैसे निपटा जाय, उन्हें कैसे संभाला जाय, तब तो वे ही आप पर हावी हो जाएँगी। फिर क्या होगा? आपकी विरक्ति और आध्यात्मिकता छू-मंतर हो जायेगी। जब तक आप मन की गहराई में नहीं उतरते और अपने अन्तर्मन को समझने का प्रयास नहीं करते, आप सफलतापूर्वक साधना नहीं कर सकते। आप जहाँ भी जायेंगे अन्तर्मन आपका पीछा करते रहेगा।

मन भगवान द्वारा दिया गया वरदान है, क्योंकि मन के बिना न तो आप ईश्वर चिन्तन कर सकते हैं, न ही एकाग्रता और ध्यान का अभ्यास कर सकते हैं। मन के भावों, विचारों और संवेदनाओं के बिना आप भावना और भक्ति का विकास भी नहीं कर सकते। इसलिए मन एक आवश्यक उपकरण है, लेकिन इसे अगर समुचित रूप से समझा और संभाला नहीं गया तो यह विनाशकारी हो जायेगा। अहित करने वाले मन को अपना हितैषी बनाना है, मन की अशुद्धता को हटाकर उसे शुद्ध बनाना है। यह भी योग का उतना ही महत्त्वपूर्ण अंग है जितना कीर्तन या जप। एक साधक होने के नाते आपको

अपनी विवेक बुद्धि का उपयोग करना है और इन्द्रियों एवं मन को नियंत्रित करने के महत्त्वपूर्ण कार्य को संभालना है। आप किसी अनियंत्रित चीज को तभी संभाल सकते हैं जब आप उसे समझते हैं। घुड़सवार जब तक घोड़े की आदतों को नहीं जान लेता, उसे संभाल नहीं सकता। इसलिए जानकारी और समझ साधना का एक महत्त्वपूर्ण अंग है।

संस्कारों की सेज

यद्यपि मन रहस्यात्मक ढंग से काम करता है, फिर भी हम मानसिक प्रक्रिया के कुछ महत्त्वपूर्ण पक्षों का विश्लेषण कर सकते हैं। मनुष्य का मन क्या है? यह किस चीज से बना है? यह किन लकीरों पर चलता है? मन पूर्व अनुभवों की उपज है। हमलोग एक छोटा-सा उदाहरण लेंगे और उससे यह प्रक्रिया सैद्धान्तिक तौर पर समझ आ जायेगी। मन को मिला अनुभव किसी प्रत्यक्ष इन्द्रिय-ज्ञान के रूप में हो सकता है। हम किसी चीज को सूंघते हैं, किसी चीज का स्पर्श करते हैं, किसी चीज का स्वाद लेते हैं या किसी अन्य तरीके से अनुभव करते हैं। एक साथ बहुत-सी चीजों का संयोग भी हो सकता है और तत्काल मन पर एक छाप उसी तरह पड़ जाती है जिस तरह ग्रामोफोन रेकॉर्ड पर ध्वनि रेखा बन जाती है। इस छाप को ही संस्कार कहते हैं।

संस्कार की प्रकृति क्या होती है? क्या यह भूमि पर बनी हल की रेखा की तरह है, या ग्रामोफोन रेकॉर्ड पर बनी ध्वनि रेखाओं के समान है? नहीं, यह गत्यात्मक है। इस प्रकार के कई सारे अनुभव मानव मन पर पड़े संस्कार को एक सक्रिय, जीवन्त तत्त्व बना देते हैं। यह व्यक्ति के चरित्र में एक गत्यात्मक प्रवृत्ति, एक वासना बन जाती है, और फिर वासनाओं का समूह मन को सदा उत्तेजित अवस्था में रखता है। वासनाएँ सदा मन के सरोवर में लहरें उत्पन्न करती रहती हैं और ये निरन्तर लहरें वृत्तियाँ बनाती हैं।

एक साधारण मन में बहुत-सी वृत्तियाँ उदय और अस्त होती रहती हैं। हमलोग उस अनुभव की इच्छा करना प्रारम्भ कर देते हैं जिसने वह संस्कार बनाया जो उन वृत्तियों के उदय होने का कारण है। इच्छा की इस अवस्था में भी कोई हानि नहीं है, परन्तु जब अहंकार का खेल शुरू होता है और हमलोगों का 'मैं' उन इच्छाओं से तादात्म्य स्थापित कर लेता है तब सारी समस्या प्रारम्भ होती है। 'चाह' के स्थान पर 'मैं चाहता हूँ' आ जाता है और इसी बिन्दु पर व्यक्ति मन के शिकंजे में आ जाता है।

आन्तरिक संघर्ष

आप चाहे किसी गुफा में ध्यान कर रहे हों या किसी नगर में, जब 'मैं' किसी इच्छा के साथ सामने आ जाता है तो ध्यान गौण हो जाता है। अब मन के दो पक्ष हो जाते हैं। मन सोचता है, 'क्या मुझे इस इच्छा की पूर्त्ति करनी चाहिए या अपना ध्यान जारी रखना चाहिए?' यदि शुद्ध मन प्रबल होता है तो वह 'नहीं' कहकर इच्छा को हटा देता है और ध्यान जारी रखता है। यदि अशुद्ध मन हावी होता है तो इच्छा प्रबल हो जाती है। मनुष्य इच्छा-पूर्त्ति के लिए प्रयास करता है और योगमार्ग से च्युत हो जाता है।

योग का अर्थ केवल निर्विकल्प समाधि नहीं है। योग का अभ्यास प्रतिक्षण होना चाहिए। यदि मन में कोई अशुद्ध विचार आता है और आप उसे हटाने में असमर्थ हैं तो आप योग में असफल हो गए। प्रत्येक विचार और प्रत्येक कर्म में आपको अपनी वृत्तियों पर विजयी होना है – तब योग सफल होता है और दिव्य जीवन जिया जा सकता है। इस प्रक्रिया के लिए कितना समय चाहिए? आधे क्षण में एक निर्णय ले लिया जाता है और संस्कार की वह लम्बी प्रक्रिया जिसने इच्छा को जन्म दिया पराजित हो जाती है, उच्चतर मन निम्नतर मन पर शानदार विजय प्राप्त कर लेता है।

मन की प्रक्रिया ऐसी है कि अनुभव से आप संस्कार प्राप्त करते हैं, संस्कार से वासना उपजती है, और वासना से वृत्ति। कल्पना वृत्ति को एक इच्छा बनाती है। तब अहंकार आकर इच्छा से जुड़ जाता है और यह तृष्णा बन जाती है। तब आप उस तृष्णा की पूर्त्ति के लिए चेष्टा करने को बाध्य हो जाते हैं।

वैज्ञानिक एक निरन्तर गति वाली यंत्र-प्रणाली को खोजने का प्रयास कर रहे हैं जो कभी रुकती नहीं है। वैसी यंत्र-प्रणाली आप में है, आपके मन के रूप में। आपको मन, वासनाओं और संस्कारों को समझना होगा। जिन संस्कारों को आपने बना दिया है वे तो वहीं हैं, आप कुछ नहीं कर सकते, पर कम-से-कम एक काम तो जरूर कर सकते हैं। आप नये संस्कारों का बनाना रोक सकते हैं और पुराने संस्कारों को ताजे संस्कारों के द्वारा अधिक सशक्त होने से रोक सकते हैं। यह कैसे संभव है?

नवीन संस्कारों का निषेध – उन्हें जला दो

प्रतिदिन आप नये अनुभवों को प्राप्त कर रहे हैं, प्रतिदिन आप कितनी सारी चीजों का प्रत्यक्ष ज्ञान पाँचों ज्ञानेन्द्रियों से प्राप्त कर रहे हैं। तब आप किस

प्रकार इन अनुभवों को मन पर प्रभाव डालने से रोक सकते हैं? इसके लिए क्या कोई विधि है?

यदि अहंकार नहीं है तो विषय मन में गहराई तक नहीं उतरते। यदि मन किसी अन्य विचार में व्यस्त है तो इन्द्रियों द्वारा लाया गया अनुभव कोई विशेष प्रभाव नहीं डालेगा, परन्तु यदि 'मैं' वहाँ है तो वह आसानी से इन अनुभवों को ग्रहण कर लेता है और आप में विषयों के लिए इच्छा उत्पन्न करता है।

सभी इच्छाओं को जलाने के लिए केवल एक ही अग्नि है। नचिकेता के पास यह अग्नि थी। उसके समक्ष कितनी आकर्षक और मनमोहक चीजों का प्रस्ताव रखा गया – धन, सौंदर्य, बल, शक्ति, राज्य, सभी विद्यायें और ललचाने वाली विषय-वस्तुएँ, परन्तु नचिकेता ने सभी प्रभावों को भस्म कर दिया, क्योंकि उसके पास मुमुक्षुत्व की अग्नि थी। यह एक ऐसी सकारात्मक अग्नि है जो इच्छाओं और वासनाओं को भस्म कर देती है। यह अग्नि सभी सच्चे साधकों की विशेषता होनी चाहिए।

यदि आप दिव्य जीवन जीना चाहते हैं तो आपका हृदय मुमुक्षुत्व का निवास-स्थान होना चाहिए, आपमें सदा योगाग्नि जलती रहनी चाहिए। आप अपने जीवन का बाह्य स्वरूप तो पूरी तरह बदल नहीं सकते, लेकिन भीतर मुमुक्षुत्व रहना चाहिए। यह अग्नि दिन और रात जलनी चाहिए, चाहे आप जगे हों या सोये हों, अकेले हों या दूसरों के बीच हों, ध्यान में हों या काम में व्यस्त हों। यह अग्नि बुझनी नहीं चाहिये।

यह मुमुक्षुत्व आपके व्यक्तित्व का अभिन्न अंग बन जाना चाहिये, तब आप दिव्य जीवन वास्तव में जी सकेंगे। यदि यह अग्नि आपके भीतर प्रज्ज्वलित है, तो आपको चिंता करने की आवश्यकता नहीं कि आप किस स्थान पर रह रहे हैं या कौन-सा काम कर रहे हैं, क्योंकि आप हमेशा दिव्य जीवन जी रहे होंगे। आप इन्द्रिय सुखों के शिकार नहीं हो सकते, परन्तु यदि आपकी सतर्कता के बावजूद भी किसी इन्द्रिय विषय का प्रभाव आन्तरिक चेतना में चला जाता है, तो आपको यह मालूम रहे कि मुमुक्षुत्व के द्वारा उसे कैसे जलाया जाता है। इसके पूर्व कि वह बाहरी द्वार में प्रवेश करे आपको उसे जला देना है। इसके लिए कौन-सी विधियाँ हैं?

नवीन संस्कारों का निषेध – प्रत्याहार और अनासक्ति

एक विधि है अपने मन को सदा अंतर्मुखी रखना। कभी भी मन को पूर्णरूपेण बहिर्मुखी नहीं होने दें, ताकि जब आप विषयों के बीच भी विचरण कर रहे हों, इन्द्रियाँ बहिर्मुखी न रहें। यह एक कठिन विधि है, पर इसका अभ्यास तो करना ही है। यह प्रत्याहार अनिवार्य है। एक साधक को हमेशा प्रत्याहार की इस महत्त्वपूर्ण योग्यता को प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिये।

अन्य विधि है अनासक्त होना। यदि कोई मांसाहारी व्यक्ति बाजार में मांसाहारी भोजन देखता है तो उसके मुँह में पानी आ सकता है, लेकिन अगर व्यक्ति शुद्ध शाकाहारी है तो उस भोजन का उसके लिये कोई अर्थ नहीं होगा क्योंकि वहाँ रुचि का अभाव है। इसी तरह हमें निरन्तर चिन्तन और स्वाध्याय द्वारा संसार की असारता, सांसारिक विषयों की व्यर्थता और समस्त सृष्टि की नश्वरता को देख-समझकर अपने अंदर अनासक्ति की मनोवृत्ति उत्पन्न करनी चाहिए। ऐसे विचारों को सदा आत्मसात् कर मन की ऐसी अवस्था निर्मित होती है, जहाँ ये चीजें अपना आकर्षण खो देती हैं। फिर अगर ये चीजें आ भी जाती हैं तो अन्दर से कोई प्रतिक्रिया नहीं होती। आपकी उनमें रुचि ही नहीं होती।

जिन चीजों को लोग नहीं चाहते, उनके विषय में यह स्वाभाविक अनुभव होता है कि उनकी ओर रुचि नहीं होती। यही भाव सभी इन्द्रिय विषयों और सांसारिक चीजों के सम्बन्ध में बन जाना चाहिए। साधक को विषयों के बीच रहते हुए भी अनासक्ति की मनोवृत्ति रखनी चाहिए। यह विधि प्रत्याहार के समान नहीं है, लेकिन फिर भी इस मनोवृत्ति का क्रमश: विकास किया जा सकता है और इसकी प्रबलता बढ़ाई जा सकती है।

इस प्रकार, प्रत्याहार और अनासक्ति द्वारा विषयों के संस्कारों को उनकी प्रारम्भिक अवस्था में ही दग्ध किया जा सकता है। यदि आपको उद्विग्न करने वाले विषयों के मध्य रहना पड़ता है तो आप इन दो विधियों द्वारा उनसे सम्पर्क काट सकते हैं। इसके बावजूद भी यदि कोई इन्द्रिय अनुभव आपके अन्त:करण में चला जाता है तो उसे नकार दें, उसे मुमुक्षुत्व की अग्नि द्वारा जला दें। आपको संसार में इसी तरह रहना चाहिये।

भगवद् स्मरण

किसी संत ने कहा है कि अगर आपको कांटों से भरे जंगल से गुजरना हो तो आप पूरे जंगल को दरियाँ बिछाकर ढक तो नहीं सकते। बुद्धिमान मनुष्य जूते पहन लेगा। इसी प्रकार भगवन्नाम के मानसिक जप और ईश्वर या किसी महान् आदर्श के सतत् स्मरण द्वारा हम अपनी सुरक्षा कर सकते हैं ताकि हम इन्द्रिय विषयों के सम्पर्क से प्रभावित न हों। यह अभ्यास मन के लिए एक सकारात्मक आधार बना देता है। मन की बाह्य विषयों की ओर जाने की प्रवृत्ति कम हो जाती है, क्योंकि अब वह एक आधार से जुड़ा है। ये सामान्य सूझ-बूझ की विधियाँ हैं जिन्हें व्यक्ति को एक आन्तरिक उपकरण की तरह रखना चाहिए।

किसी भी इच्छा के साथ स्वंय को न जोड़ें। यदि इच्छा बहुत प्रबल हो तो आप भी अड़ियल बने रहें, उसके सम्मुख घुटने न टेकें, बल्कि अपना ध्यान हटा लें। मैंने हमेशा कहा है, 'इच्छा के प्रकट होते ही उसे हटा दें।' यदि मन में कोई इच्छा आती है और आप उसे पूरा कर देते हैं, तो जिस संस्कार के कारण वह इच्छा उत्पन्न हुई थी, वह मजबूत हो जायेगा। तात्पर्य यह कि इच्छा-पूर्ति द्वारा इच्छा कभी नष्ट नहीं होती। इच्छाओं को पूरा करके आप उन्हें कभी समाप्त नहीं कर सकते। जैसे अग्नि की ज्वाला घी डालने से बुझेगी नहीं, वैसे ही इच्छा पूरी करने से वह मजबूत होती है।

मन के साथ सहयोग न करें। जब मन में इच्छायें उत्पन्न हों तो उन्हें पूरा न करें। मन का स्वभाव ही है इच्छा करना। मन और इच्छा एक-दूसरे के पर्याय हैं। इच्छाओं की पूर्ति न करना ही मन पर विजय प्राप्त करने का एकमात्र उपाय है।

विवेक

मन को आप जितना अधिक समझने लगते हैं, उतना ही आप इसके सूक्ष्म खेलों और प्रक्रियाओं का सामना करने में सक्षम हो जायेंगे। तब आप मन

को साधना के लिए एक प्रभावी उपकरण के रूप में उपयोग कर सकेंगे। एक साधक के रूप में आपको सबसे अनुकूल परिस्थितियाँ दी जा सकती हैं। आपको अनुकूल परिवेश, आदर्श संगति, आध्यात्मिक पुस्तकें दी जा सकती हैं, फिर भी यदि आप मन की रहस्यात्मक प्रकृति को नहीं समझते, अपनी वासनाओं को कम नहीं करते, और अपनी संकल्प-शक्ति को मजबूत नहीं करते तो किसी चीज का उपयोग नहीं कर सकते।

इसलिए मन का अध्ययन करें, इसे अच्छी तरह समझें और जानें कि इसे कैसे संभाला जाता है। यह योग, वेदान्त और दिव्य जीवन का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। साधना के प्रारम्भ में यह अनिवार्य है। जब आप इसका अभ्यास कर लेते हैं तो ईश्वर-साक्षात्कार सरल हो जाता है। कहा जाता है कि ईश्वर-साक्षात्कार फल-फूल तोड़ने के समान सरल है, बशर्ते आप अशुद्धियों से पूर्णरूपेण मुक्त हो गये हों। इसलिए आपको धैर्यपूर्वक प्रयास करते जाना है। विनम्रता, निष्ठा और गम्भीरता के साथ आप अपने मन के अध्ययन में जितना अधिक समय लगायेंगे, योग मार्ग पर सफल होने और दिव्य जीवन जीने में उतने समर्थ होंगे।

मन में एक शाश्वत संघर्ष चल रहा है। यह संघर्ष मन की निम्नतर वासनाओं और उच्चतर आध्यात्मिक आकांक्षाओं के बीच है। मन का वह भाग जो इन्द्रियों द्वारा बाहर की ओर खींचा जाता है और मन का वह भाग जहाँ विवेक ने अभिव्यक्त होना प्रारम्भ कर दिया है, इन दोनों के बीच निरंतर संघर्ष चलता है। विवेक यह चयन करना प्रारम्भ कर देता है कि क्या उचित है और क्या अनुचित, क्या करना चाहिए और क्या नहीं, अपनी प्रगति के लिए क्या अनुकूल है और क्या प्रतिकूल।

जब विवेक की क्षमता जागृत होती है तब साधक क्यों और किसलिए जैसे प्रश्न करना प्रारम्भ करता है। विवेक की जागृति सत्संग से या जीवन के कठिन अनुभवों से या पूर्व संस्कारों के जागने से या अन्य किसी भी कारण से हो सकती है। विषय-वासनाओं से भरा निम्न मन व्यक्ति को नीचे खींचने का प्रयास करता है, जबकि उच्चतर मन ऊपर की ओर खींचता है। अन्त में मनुष्य का आध्यात्मिक स्वरूप उसके निम्नतर, विषयासक्त पक्ष पर अपनी श्रेष्ठता स्थापित कर लेता है और उसे आध्यात्मिक चेतना में पूर्णतया अवस्थित कर लेता है, जो योग की चरम अवस्था है।

उड़ जा पंछी मौत से दूर

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

मानव है एक पंछी और उसकी उड़ान है जीवन। जीवन की उड़ान से ऐ मानव, तू मौत रूपी उत्तुंग, भयानक और विकराल पर्वतश्रेणी को पार कर ले। तू शिव और शक्ति को आत्म-समर्पण कर दे। वे तुम्हें आत्मशक्ति देकर तुम्हारे डैनों में अगाध शक्ति भर देंगे। फिर न तू जीवन से थक जायेगा, न मौत से हार खायेगा। तू अविरत गति से ईश्वर के उन्मुक्त साम्राज्य में विचरण करता रहेगा, अनंत युगों तक अमरत्व के अमृतमय उत्संग में खेलता रहेगा। आ, मैं धीरे से, आहिस्ता से तेरे कानों में जीवन का महामंत्र फूकूँगा – वह मंत्र है 'त्याग'।

स्वेच्छापूर्वक आत्म-समर्पण करने का नाम है त्याग। यही है परम पवित्र एवं उच्च आदर्श और श्रेष्ठ भावना। यही है परम कर्त्तव्य। फिर भावना श्रेष्ठ या कर्त्तव्य, इस प्रश्न का स्थान ही कहाँ? त्याग के इस भावनामय कर्त्तव्य से और कर्त्तव्य-भावना से हमें जीवन को पूर्णतया बदल देना है। त्याग के चरणों में हमें प्रेमपूर्वक अपना सारा जीवन न्यौछावर करना है। त्याग में प्रेम सन्निहित है और प्रेम का प्रोज्ज्वल स्वरूप ही त्याग है। त्याग विवेकपूर्ण होना चाहिए।

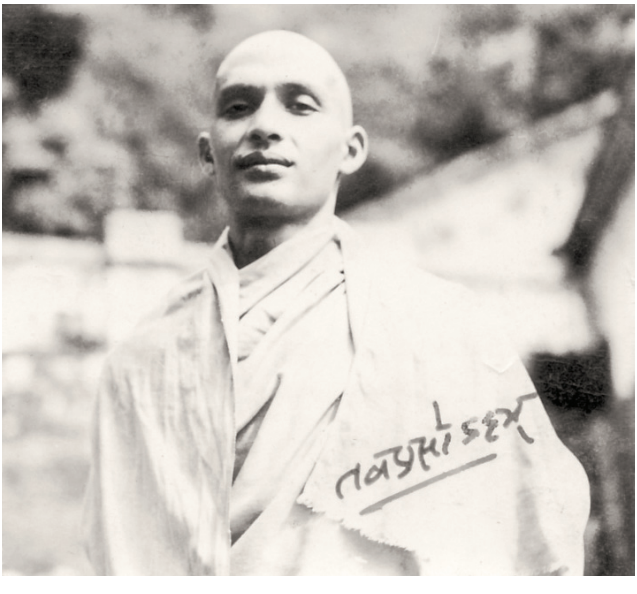

अंधविश्वास से किया गया त्याग क्या त्याग है? त्याग का घमण्ड त्यागी के हृदय की कालिमा है। 'अपने सर्वस्व का मैं बलिदान दे रहा हूँ' इस भावना का स्वप्न में भी प्रवेश त्यागी की लघुता का सूचक है। जिस सिद्धान्त को जीवन में अपनाया, जिस महानुभाव को जीवन समर्पित किया, उनके प्रति मरते दम तक और जब तक जन्म लेना पड़े, तब तक वफादार रहना ओर उसमें किसी भी प्रकार की बाधा पहुँचाने वाले तमाम तत्त्वों से सदा दूर रहना, यही है सच्चा त्याग। त्याग के गौरव गरिमा के लिए त्यागी के दिल में शोक और व्याकुलता नहीं, किन्तु आनंद और उल्लास चाहिए।

त्यागी को तलवार की तरह अपना जीवन बिताना चाहिए। तलवार को जीवन का आदर्श समझकर उसकी तरह जीवन समर्पण करना चाहिए। तलवार एक बार जिसके हाथों में जाती है, उसका वह कभी विरोध नहीं करती। वह इसको अच्छी तरह से जानती है कि उसका आदर-निरादर सब कुछ मालिक के ही हाथों में है। अतः मालिक के हाथों में जाकर उसका वह विरोध नहीं करती। अपने टुकड़े-टुकड़े हो जाने पर भी वह आह तक नहीं भरती। यही तो है त्याग। स्वेच्छा से किया हुआ आत्म-समर्पण ऐश्वर्य के समान भोगा जा सकता है, किन्तु ऐश्वर्य के भोग का फल है दुःख और आत्म-समर्पण का फल है सुख। पहले में गर्व है और दूसरे में गौरव।

किसी कवि ने लिखा है कि 'मत हो विरक्त जीवन से, अनुरक्त न हो जीवन पर।' हमारा जीवन ऐसा ही होना चाहिए। संसार के सुख भोगों के बीच रहते हुए भी हमें उनसे निर्लिप्त रहना चाहिए। हमें संसार से भागना नहीं है, सांसारिकता से भागना है। प्रलोभनों से भागना नहीं है, किन्तु उन्हें पराजित करना है।

संसार से या संसारी से घृणा करना या कठोरता दिखलाना त्याग नहीं है। अनुरक्ति और विरक्ति का मध्यम मार्ग ही त्याग है। राग को वस्तु या व्यक्ति विशेष में सीमित न रख कर समान रूप से विभाजित करने का नाम है त्याग।

त्याग द्वारा हमें कुटुम्ब के बंधन को, समाज के बंधन को और दुनिया के बंधनों को काटना है। सुख-वैभव रूपी लौह-शलाकाओं के संसार-पिंजड़े को तोड़कर उड़ जाना है, अमरता के गीत गाने, स्वतंत्रता का आस्वादन करने, दूर दूर, बहुत दूर विशाल वन में जहाँ ..., जहाँ सब कुछ अनंत ही अनंत है। 'उड़ जा पंछी मौत से दूर' के परम पवित्र मंत्रोच्चारण के साथ प्रयत्न करते रहना है, जब तक हम वहाँ पहुँच न पाएँ।

– योग-वेदान्त के फरवरी 1956 अंक से साभार उद्धृत

स्वान सिद्धांत

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

आज का बाजार भोग-विलास की नई-नई सामग्रियों से भरा पड़ा है, जो मनुष्य जीवन एवं समाज को भटकाव और विक्षेप के मार्ग पर ले जा रहे हैं। इससे हमारे अहंकार, हमारी स्व-निर्मित छवि की ही पुष्टि हो रही है। आर्थिक समृद्धि जीवन में दुर्गुणों को भी जन्म दे रही है, यह धन-सम्पत्ति का स्वाभाविक परिणाम है। आज हमें अपने सामर्थ्य पर कम और अपने कागजी रुपयों पर ज्यादा विश्वास है। आत्मविश्वास की कमी के कारण शरीर-मन-परिवार का ढाँचा कमजोर पड़ जाता है तथा जीवन भ्रम, तनाव और चिन्ता से भर जाता है। आज हमलोगों के साथ यही हो रहा है। हम दबाव, तनाव और असंतोष को सम्भालने में असमर्थ हो गये हैं। हमारे मन में हमेशा उस अप्राप्त वस्तु को पाने की चाह बनी रहती है जो हमें प्रसन्न और सन्तुष्ट बना सके।

योग के मतानुसार यदि हम अपनी ऊर्जा के नकारात्मक एवं विक्षिप्त प्रवाहों पर थोड़ा नियंत्रण और संयम ला सकें तो हम अधिक रचनात्मक बन सकते हैं, परंतु इस संयम का उपाय क्या है? मैं आपको इसके लिए एक व्यावहारिक विधि बतलाता हूँ, जो 'स्वान सिद्धांत' के नाम से जानी जाती

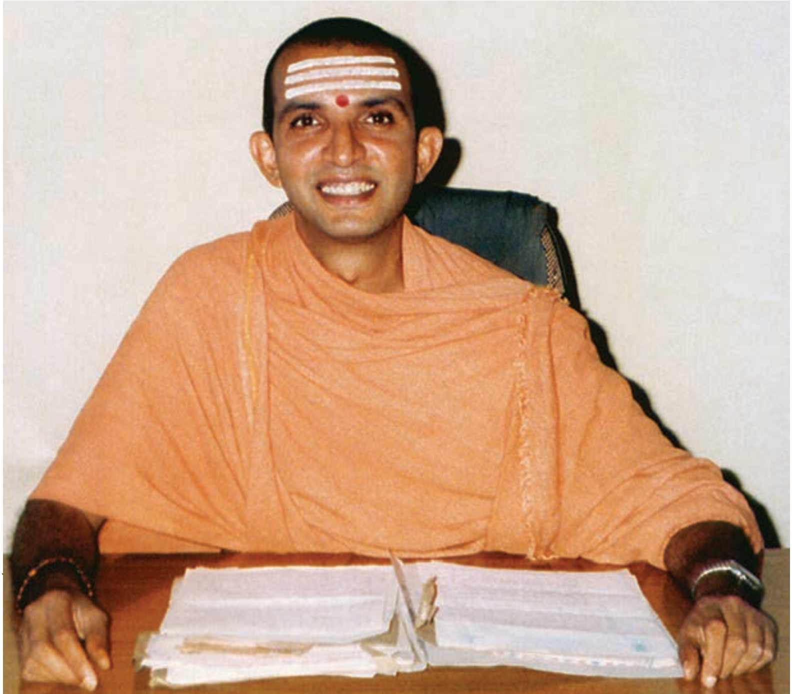

है। स्वान शब्द अंग्रेजी के चार अक्षरों, SWAN से आया है जिसका तात्पर्य हमारे सामर्थ्यों (Strengths), कमजोरियों (Weaknesses), महत्त्वाकांक्षाओं (Ambitions) एवं आवश्यकताओं (Needs) से है।

आप अपने व्यक्तित्व, व्यवहार, विचार प्रक्रिया, मनोवृत्तियों और आपसी संबंधों को कैसे सुधार सकते हैं? यह ध्यान की एक ऐसी विधि द्वारा संभव है जिसमें आप इन्हीं चार आयामों का विश्लेषण करते हैं।

स्वान का अभ्यास

एक कोरा कागज या डायरी लीजिये, उसमें चार कॉलम बनाइये। पहले कॉलम में अपने सामर्थ्यों की सूची बनाइये। फिर दूसरे कॉलम में अपनी कमियों और कमजोरियों को लिखिये जो आपके विकास में बाधक लगती हैं। तीसरे कॉलम में अपनी महत्त्वाकांक्षाओं को लिखिये, चाहे वह चाँद तक पहुँचने की ही क्यों न हो। अंत में अपनी तात्कालिक और दीर्घकालीन आवश्यकताओं को सूचीबद्ध कीजिये जो एक संतुष्ट, सम्पूर्ण जीवन बिताने के लिए जरूरी लगती हैं।

प्रत्येक व्यक्ति में अपने सामर्थ्यों, कमजोरियों, महत्त्वाकांक्षाओं एवं आवश्यकताओं को पहचानने की क्षमता है। हम अपने सामर्थ्यों के कारण ही जीवन में क्रिया-कलाप करते और आगे बढ़ते हैं। कमजोरियाँ भी सभी के जीवन में होती ही हैं। ये सामर्थ्य एवं कमजोरियाँ शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक स्तर पर होती हैं। हमारी आवश्यकताएँ भी होती हैं जो शारीरिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक एवं आध्यात्मिक स्तरों पर अभिव्यक्त होती हैं। हमारी महत्त्वाकांक्षाएँ व्यक्तिगत हो सकती हैं या परिवार, समाज, नाम, यश, पद आदि के सम्बन्ध में हो सकती हैं। ये आयाम हमारे जीवन की नींव की तरह हैं।

इनको सूचीबद्ध करते समय आपको अपने सामर्थ्यों एवं कमजोरियों के बीच या आवश्यकताओं एवं महत्त्वाकांक्षाओं के बीच दिग्भ्रमित नहीं होना है। सटीक चिंतन के माध्यम से उनकी वास्तविक पहचान करके उनको सूचीबद्ध करना है।

सामर्थ्यों के अंतर्गत दृढ संकल्पशक्ति, स्पष्ट चिंतन, प्रेम और करुणा जैसे वे सभी गुण आते हैं जिन्हें जीवन में सकारात्मक एवं रचनात्मक ढंग से अभिव्यक्त करके स्वयं तथा दूसरों का उत्थान किया जा सके।

कमजोरियाँ भी कई प्रकार की हो सकती हैं, जैसे संकल्पशक्ति की कमी, वैचारिक अस्पष्टता, आत्मविश्वास की कमी, हीन भावना, घबराहट, तनाव या चिंता की आदत। ये कमजोरियाँ प्राय: हमारे सामर्थ्यों पर हावी होकर उन्हें प्रभावहीन कर देती हैं, लेकिन यह जानते हुए भी हम अपनी कमजोरियों को छिपाने का ही प्रयास करते हैं। वास्तव में जीवन का संघर्ष इन कमजोरियों के विरुद्ध ही है।

हम कमजोर नहीं रहना चाहते, लेकिन साथ ही अपने सामर्थ्यों की सजगता भी नहीं बढ़ाते। हम अपने सामर्थ्यों के प्रति सजग होते भी हैं तो मात्र दार्शनिक स्तर पर। अपनी कमजोरियों को दूर करने के लिए हम इन्हें वास्तविकता के धरातल पर उतारने का शायद ही कोई प्रयास करते हों। यदा-कदा हम ऐसा प्रयास करते भी हैं तो अपनी कमजोरियों के सही ज्ञान के अभाव में इसका परिणाम आक्रोश या अढ़ियलपन के अलावा कुछ नहीं होता।

तीसरा आयाम महत्त्वाकांक्षाओं का है। हम सभी के जीवन में अपेक्षाएँ और महत्त्वाकांक्षाएँ होती हैं। ये किसी भी प्रकार की हो सकती हैं। कभी-कभी अवास्तविक भी होती हैं। यह सही है कि हमारी महत्त्वाकांक्षा ही हमारे कर्मों की प्रेरक शक्ति है, परंतु जीवन की स्थितियों-परिस्थितियों की हमारी समझ अत्यंत सीमित है, जिस वजह से हम अपनी महत्त्वाकांक्षाओं के सन्दर्भ

में स्पष्टता नहीं ला पाते। इसके अलावा महत्त्वाकांक्षाएँ नकारात्मक भी हो सकती हैं जिन्हें सकारात्मकता की ओर दिशान्तरित करके हम अपने कर्मों को सुधारने का प्रयास कर सकते हैं।

चौथा आयाम मानवीय आवश्यकताओं का है। पोषण हेतु शरीर को भोजन की आवश्यकता है। परिवार की कुछ आवश्यकताएँ होती हैं। इसी तरह व्यक्तिगत, मानसिक, सामाजिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक आवश्यकताएँ भी होती हैं, जिन्हें पूरा करने का हम भरसक प्रयास भी करते हैं।

स्वान का व्यावहारिक प्रयोग

इन चारों सूचियों का समय-समय पर अवलोकन कीजिये, इन पर चिंतन कीजिये, आवश्यकतानुसार उनमें विषय-वस्तुओं को घटाते-बढ़ाते रहिये जब तक आपको इस बात की संतुष्टि न हो जाय कि ये सूचियाँ आपके चरित्र एवं व्यक्तित्व को लगभग सही तरीके से दर्शा रही हैं।

तत्पश्चात् अपने किसी एक सामर्थ्य को चुनकर उसे एक महीने तक अधिक-से-अधिक विकसित कीजिये। इसी प्रकार एक माह के लिये अपनी किसी कमजोरी का चुनाव कर उसे दूर करने का प्रयास कीजिये। अपनी किसी महत्त्वाकांक्षा का विश्लेषण कीजिये, देखिये कि वह महत्त्वाकांक्षा आपकी किसी प्रबल आंतरिक इच्छा का परिणाम है या नहीं? अपनी आवश्यकताओं का इस प्रकार विश्लेषण कीजिये और फिर महत्त्वाकांक्षाओं एवं आवश्यकताओं में संतुलन लाने का प्रयास कीजिये।

किसी एक कमजोरी पर विजय प्राप्त कीजिये, एक सामर्थ्य को पुष्ट कीजिये और अपनी महत्त्वाकांक्षाओं एवं आवश्यकताओं पर ध्यान दीजिए। जब आप एकान्त में हों, स्वान सिद्धांत पर चिंतन कीजिये। इस प्रकार आप दिनभर की अभिव्यक्तियों और प्रतिक्रियाओं के प्रति सजगता विकसित कर पायेंगे। फिर आप आत्म-संयम का एक अच्छा ढाँचा खड़ा कर सकेंगे जिसके दायरे में आप समस्त कार्य अपने सामर्थ्यों का उपयोग करते हुए, अपने व्यक्तित्व की कमजोरियों और दुर्बलताओं के प्रति सजग रहते हुए तथा आवश्यकता एवं महत्त्वाकांक्षा के अंतर को समझते हुए निष्पादित कर सकेंगे।

एक बार हम अपने व्यक्तित्व को प्रभावित करने वाले सामर्थ्यों, कमजोरियों, महत्त्वाकांक्षाओं एवं आवश्यकताओं की पहचान कर उन्हें व्यवस्थित करने में सफल हो जाते हैं, तब फिर हम आत्मज्ञान और बाह्य सजगता के बीच

सामंजस्य स्थापित कर पायेंगे। यही आशा की यौगिक अवधारणा भी है। यहाँ आशा का तात्पर्य मानसिक स्पष्टता, प्रेरणा, संतोष एवं अपनी क्षमताओं में विश्वास के साथ आगे बढने से है। इस प्रकार जीवन के रहस्यों पर से आवरण हटने लगते हैं और जीवन का सौन्दर्य प्रकट होने लगता है।

अपने अंदर झांकिये

कुछ व्यक्तियों में सामर्थ्य प्रधान होते हैं तो कुछ में कमजोरियाँ। कुछ लोग अपनी महत्त्वाकांक्षाओं की पूर्त्ति में ही लगे रहते हैं और कुछ को अपनी शारीरिक, पारिवारिक, सामाजिक एवं व्यावसायिक आवश्यकताओं का ही ख्याल रहता है।

हमारे सामर्थ्यों, कमजोरियों, महत्त्वाकांक्षाओं और आवश्यकताओं से ही हमारे वर्तमान व्यक्तित्व का निर्माण हुआ है। जब कोई व्यक्ति अपने सामर्थ्य को प्रकट करता है तब हम कहते हैं कि वह व्यक्ति सृजनात्मक, कर्मठ, मिलनसार और करुणाशील है, उसका मन स्पष्ट है, वह दूसरों की सहायता के लिए तत्पर रहता है। उससे सम्पर्क में आने वाले लोग अनायास ही प्रेरणा और मार्गदर्शन प्राप्त करते हैं।

जब कोई अपनी कमजोरियों को प्रकट करता है तब वह हमें अस्पष्ट, दुर्बल, निस्तेज, शक्तिहीन और अनिश्चित दिखलाई पड़ता है। जब कोई स्वयं को अपनी महत्त्वाकांक्षाओं एवं अभिलाषाओं के माध्यम से अभिव्यक्त करता है तब हम उसे एक निष्ठुर, अहंकारी व्यक्ति के रूप में देखते हैं जो अपनी स्वार्थपूर्त्ति हेतु दूसरों को हानि पहुँचाने से भी नहीं हिचकता। जब कोई अपनी आवश्यकताओं को प्रकट करता है तब हम उसकी पहचान एक ऐसे आत्मकेंद्रित व्यक्ति के रूप में करते हैं जिसके समस्त प्रयास स्वयं की देखभाल तक ही सीमित हैं और जो दूसरों की खास परवाह नहीं करता।

यौगिक अवधारणा के अनुसार व्यक्तित्व के दो आयाम होते हैं। प्रथम स्वान अर्थात् सामर्थ्यों, कमजोरियों, महत्त्वाकांक्षाओं और आवश्यकताओं के रूप में प्रकट होता है, जबकि दूसरा अप्रकट, सूक्ष्म एवं प्रसुप्त होता है।

मन के मित्र बनिये

स्वान अभ्यास आपको अपने मन का मित्र एवं मार्गदर्शक बनाता है। अपने मन पर शासन करने का प्रयास कभी मत कीजिये, बल्कि अपने मन को स्वीकारना

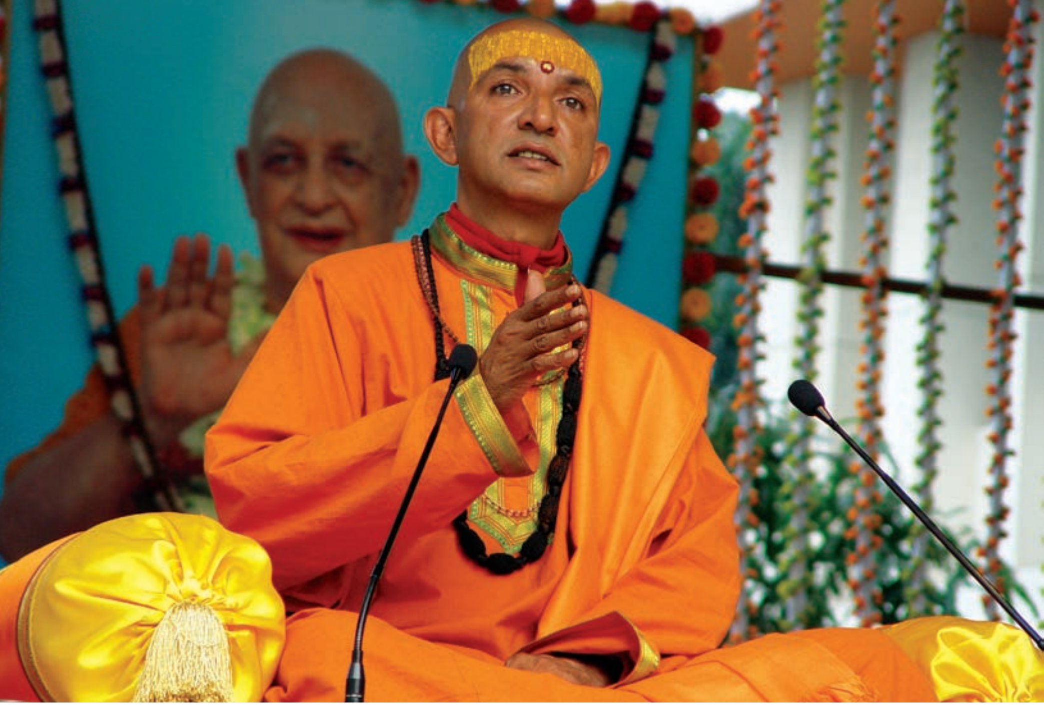

होगा। यही अनुशासन की यौगिक अवधारणा है। अनुशासन स्वयं पर थोपे जाने वाला नियम-कानून नहीं है, यह तो अपने व्यक्तित्व को पहचानने और उससे मित्रता करने का सहज परिणाम है।

जब हम अपने मन के विषय में बात करते हैं, अपने विचार, दृष्टिकोण एवं स्वभाव में परिवर्तन लाने की बात करते हैं, तब हम अपने स्वभाव के विरुद्ध अस्वाभाविक प्रक्रियाओं, विधियों या नियमों को लागू करने की भूल करते हैं और फिर एक समय ऐसा आता है जब मन विद्रोह करता है। यदि हम अपने मन की संरचना को तुरंत बदलने का प्रयास करेंगे तो यह काम नहीं करेगा।

यदि आप किसी मानसिक समस्या से ग्रसित हैं तो इसके उपचार हेतु प्रथम आवश्यकता आत्म चिंतन और अवलोकन की है, क्योंकि किसी भी मानसिक समस्या की प्रारम्भिक जानकारी आपको उसके बाह्य लक्षणों के आधार पर ही होती है। चाहे वह अनिद्रा हो, स्मरणशक्ति की कमी हो, या कोई मनोवैज्ञानिक, भावनात्मक या नैतिक समस्या हो, उसके मूल कारण को आप नहीं जानते। मूल कारण की पहचान हेतु ही चिंतन और ध्यान की सर्वप्रथम आवश्यकता होती है।

स्वान के एक घटक से दूसरे की ओर हम इतनी तीव्रता से जाते हैं कि हम अपने सामर्थ्यों और कमजोरियों, अपनी महत्त्वाकांक्षाओं और

आवश्यकताओं में कुछ भेद ही नहीं कर पाते। वे एक-दूसरे में घुल-मिल जाते हैं। अक्सर हमारी महत्त्वाकांक्षा जाने-अनजाने आवश्यकता बन जाती है और यही हमारे सांसारिक क्रिया-कलापों को निर्देशित करने लगती है। कोई आवश्यकता हमारी कमजोरी भी बन जाती है, या कभी-कभी यह हमारा सामर्थ्य भी बन सकती है।

इसलिए तर्कसंगत रूप से यह समझना कठिन हो जाता है कि आखिर हमारे व्यक्तित्व की गहराइयों में वास्तविक रूप से क्या घटित हो रहा है। इसी समय द्वन्द्व होने लगते हैं, हमारी मानसिक स्पष्टता समाप्त हो जाती है। विचारों एवं भावनाओं की बहुलता के कारण नर्वस ब्रेकडाउन भी हो जाता है।

स्वयं को एवं दूसरों को स्वीकार कीजिये

चाहे आप पाश्चात्य जगत् के हों या प्राच्य जगत् के, योग के माध्यम से आपको अपने सामर्थ्यों, कमजोरियों, महत्त्वाकांक्षाओं और आवश्यकताओं की सही समझ विकसित करनी होगी। इसके अभाव में आप स्वयं पर नियंत्रण नहीं कर पायेंगे। यदि आप अपने व्यक्तित्व की सूक्ष्म अभिव्यक्तियों को नियंत्रित और निर्देशित करना चाहते हैं तो आपको इन चारों क्षेत्रों के प्रति अपनी सजगता और समझ को बढ़ाना होगा। सामान्य योगाभ्यासों के साथ-साथ आपको एक अन्य दृष्टिकोण भी विकसित करना होगा, जो ध्यानात्मक विधि द्वारा सम्भव है। आपको अपनी शारीरिक एवं सामाजिक आवश्यकताओं के अनुरूप काम करना है। योगविद्या व्यक्ति को अपना ख्याल करने से नहीं रोकती। यह विरक्ति का मार्ग नहीं है, बल्कि स्वयं को स्वीकारने, समझने और बदलने का मार्ग है। आप जैसे भी हैं, स्वयं को स्वीकार कीजिये और फिर अपने ज्ञान का प्रयोग करते हुए परिवर्तन और विकास कीजिये। यही योग के मुख्य सिद्धांत और अभ्यास हैं।

आपकी स्वान सूची एक व्यक्तिगत चीज है, इसे किसी भी व्यक्ति को दिखाने की जरूरत नहीं। तीन-चार माह के पश्चात् जैसे-जैसे आपकी समझ और सजगता विकसित होगी, वैसे-वैसे यह सूची छोटी या बड़ी होती जायेगी। जैसे-जैसे विभिन्न मानसिक स्थितियों को सम्भालने की क्षमता का विकास होगा, आप पायेंगे कि मानसिक व्यवस्थीकरण की प्रक्रिया सरल है। इसके लिये आपको किसी मनोचिकित्सक की आवश्यकता नहीं। इससे आपको व्यक्तिगत संतोष और उपलब्धि का अनुभव होगा। इस तरह आत्मावलोकन

और ध्यान पहला कदम है अपने सामर्थ्यों, कमजोरियों, महत्त्वाकांक्षाओं और आवश्यकताओं की वास्तविक पहचान हेतु, और फिर दूसरा कदम उनको सूचीबद्ध कर उनपर चिंतन करना है।

दृष्टिकोण में परिवर्तन

स्वान सिद्धांत के अभ्यास के साथ मंत्र साधना का समावेश भी किया जा सकता है। ये मानसिक एवं भावनात्मक असंतुलन को दूर करने के लिए शक्तिशाली यौगिक मनोचिकित्सक विधियाँ सिद्ध हो सकती हैं। जब इन विधियों को सजगतापूर्वक अपनी दिनचर्या में शामिल कर लिया जाता है तब आप आनंददायक जीवन जीना शुरू करते हैं। आप हमेशा अपनी परिस्थितियों में परिवर्तन तो नहीं ला सकते, लेकिन अपनी अवधारणा और दृष्टिकोण में परिवर्तन अवश्य कर सकते हैं।

एक बार एक व्यक्ति मेरे पास आकर कहने लगे, 'स्वामीजी, मैं उच्च रक्तचाप से पीड़ित हूँ।' मैंने उनसे पूछा कि वे इसके लिये क्या कर रहे हैं? तब उन्होंने उत्तर दिया, 'मैं इसके लिये सामान्य औषधि का सेवन तो कर रहा हूँ, पर बहुत मानसिक पीड़ा और अशांति का सामना भी कर रहा हूँ।' जब मैंने पूछा, 'क्यों?' तो उन्होंने उत्तर दिया, 'मेरी बहू ने मुझे क्रोधवश कुत्ता कह दिया और तब से मैंने खुद को एक दुबला-पतला, कमजोर, बीमार, सड़कछाप कुत्ता मान लिया। यह छवि मेरे मन में ऐसे घर कर गई है कि इसे अपने मन से बाहर ही नहीं कर पा रहा हूँ। यह विचार मुझे बार-बार आता है कि उसने मुझे कुत्ता क्यों समझा? यह मेरी एक बड़ी समस्या बन गई है और मुझे यकीन है कि मेरे उच्च रक्तचाप का कारण यही है।'

मैंने उन्हें इसका समाधान बताया, 'खुद को एक सड़कछाप कुत्ता मानने की बजाय यह क्यों नहीं सोचना शुरू कर देते कि आप किसी रईस के कुत्ते हैं, जो बढ़िया गाड़ी में घूमता है, सुंदर गद्देदार बिस्तर पर सोता है और जिसकी दिनभर देखभाल की जाती है।' व्यक्ति भौंचक्के रह गये, और बोले, 'स्वामीजी, मैं आपसे समस्या का समाधान चाहता था, और आपने तो मुझे सड़कछाप कुत्ते के स्थान पर मेमसाहिब का कुत्ता बना दिया!' 'जी हाँ,' मैंने उत्तर दिया।

जब मैं उनसे एक महीने बाद दुबारा मिला तो उन्होंने कहा, 'मैं अब उच्च रक्तचाप के लिए कोई दवा नहीं ले रहा हूँ, मैं बिल्कुल ठीक हो गया हूँ।' 'ऐसा कैसे हुआ?' 'पहले मैं खुद को सड़कछाप कुत्ते की पीड़ा और कष्ट भोगते

हुये अनुभव करता था, लेकिन अब उसी सुख का अनुभव कर रहा हूँ जो करोड़पति का कुत्ता करता है, और अब मुझे कोई मानसिक समस्या नहीं है।'

परिस्थितियाँ नहीं बदलीं, केवल उसके दृष्टिकोण में परिवर्तन हो गया। मैंने उनसे यह नहीं कहा, 'नहीं, नहीं, आप कुत्ता नहीं हैं।' मैंने सरल-सा सुझाव दिया, 'अगर आप खुद को कुत्ता समझते ही हैं तो फिर एक सुखी कुत्ता बन जाइये।' यदि कोई व्यक्ति मुझे कुत्ता या गधा कहता है और मैं स्वयं को कुत्ता या गधा समझने लग जाऊँ तो इसका अर्थ यही हुआ कि मैं दूसरों की बातों पर ही अधिक विश्वास करता हूँ और मेरा अपना कोई ठोस मत नहीं है। हम में इतना आत्मबल होना चाहिये कि हम कह सकें, 'आप मुझे हजार बार कुत्ता या गधा कहें, मुझे कोई फर्क नहीं पड़ने वाला है, क्योंकि मैं जानता हूँ कि मैं क्या हूँ।'

हम कमजोर क्यों बनें? हम जीवन में जिन नकारात्मकताओं या सकारात्मकताओं का सामना करते हैं, उनसे प्रभावित हो जाते हैं और हमारी प्रतिक्रियाएँ उन्हीं के अनुरूप होती हैं। हम अपनी वास्तविक स्थिति के प्रति बिल्कुल भी सजग नहीं रहते। हमारी स्वाभाविक प्रकृति क्या है? यदि हम स्वयं का आकलन दूसरों के मतानुसार करते हैं, तब ध्यान की विधि इसे ठीक कर सकती है। यह हमें अपनी स्व-प्रकृति की पहचान कराकर अपने व्यक्तित्व के दोषों को दूर करने तथा आंतरिक विकास का अनुभव करने में मदद करती है।

हमें मालूम होना चाहिए कि हम उन परिस्थितियों को कैसे सम्भाल सकते हैं जो हमारे स्वयं के प्रति दृष्टिकोण को बदलती हैं। इसके लिये तीन प्रक्रियाएँ हैं – आत्मावलोकन एवं ध्यान के माध्यम से अपने सामर्थ्यों, कमजोरियों, महत्त्वाकांक्षाओं और आवश्यकताओं का अन्वेषण; स्वान सिद्धांत द्वारा उनकी सटीक पहचान तथा मंत्रों के माध्यम से आंतरिक स्तर पर सामंजस्य। इन प्रक्रियाओं से सजगता का विकास एवं जीवन में सामंजस्यपूर्ण व्यवहार होने लगता है और आप एक संतुलित, सुव्यवस्थित व्यक्ति के रूप में जाने जायेंगे।

आंध्र प्रदेश में आध्यात्मिक अभियान

स्वामी भक्तिचैतन्य सरस्वती ने आंध्र प्रदेश तथा अन्य क्षेत्रों में निम्नलिखित कार्यक्रम आयोजित किये –

- 6 से 8 जुलाई तक स्वामी सत्यानंद योग आश्रम, अमरावती, विजयवाड़ा के साधना हॉल में 'दैनिक जीवन में योग' विषय पर तीन दिवसीय कार्यक्रम आयोजित किया गया। कार्यक्रम में स्वामी भक्तिचैतन्य ने 50 से अधिक प्रतिभागियों को योग को अपने जीवन में उतारने के लिए प्रेरित किया।
- 10 से 12 जुलाई तक विशाखापत्तनम जिले के एस.आर. एजुकेशनल ट्रस्ट में 'दिव्य जीवन जीने के लिए सर्वसुलभ योग' तथा 'तनाव प्रबंधन' विषयों पर एक कार्यक्रम आयोजित किया गया था। सातवीं से बारहवीं कक्षा तक के 600 से अधिक विद्यार्थियों को सत्यानंद योग से अवगत कराया गया, साथ ही शिक्षकों एवं कर्मचारियों के लिए भी एक सत्र आयोजित किया गया। शाम को कीर्तन, ध्यान तथा सत्यानंद योग परंपरा के विकास पर

सत्संग हुआ। इस कार्यक्रम के संचालन में स्वामी भक्तिचैतन्य को करुणा श्री और रजनी ने सहयोग दिया।

- 23 जुलाई और 20 अगस्त को स्वामी भक्तिचैतन्य ने सत्यानंद योग केंद्र, चेन्नई के संन्यासी शिवऋषि द्वारा आयोजित कार्यक्रमों में भाग लिया। उन्होंने सत्संग सत्रों में कई प्रश्नों के उत्तर दिए और योग निद्रा सत्रों का संचालन किया।
- 1 से 5 अगस्त तक ब्रह्मकुमारी मुख्यालय, माउंट आबू, राजस्थान के निमंत्रण पर स्वामी भक्तिचैतन्य ने सत्यानंद योग परंपरा विषय पर 2,500 से अधिक प्रतिभागियों को संबोधित किया।
- 11, 12 और 15 अगस्त को विजयवाड़ा आश्रम में साठ वरिष्ठ नागरिकों के लिए 'दिव्य जीवन जीने के लिए योग' विषय पर कार्यक्रम आयोजित किए गए। सत्रों में समग्र स्वास्थ्य के लिए आसन, प्राणायाम और ध्यान के अभ्यास शामिल थे।

कर्मयोग साधना

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

कर्मयोग का अभ्यास साधक को आत्म-ज्ञान ग्रहण करने के लिए तैयार करता है। यह उसे वेदान्त के अध्ययन के योग्य बनाता है। नासमझ साधक कर्मयोग के प्रारम्भिक प्रशिक्षण के बिना ही ज्ञानयोग के अभ्यासों में कूद पड़ते हैं। यही कारण है कि वे सत्य का साक्षात्कार करने में पूर्णतया असफल होते हैं। अशुद्धियाँ उनके मन में अभी भी छिपी हुई हैं। वे ब्रह्म और माया के बारे में ही बोलते रहते हैं और व्यर्थ के वाद-विवादों और परिचर्चाओं में अपना कीमती समय बर्बाद करते हैं। उनका दर्शन उनके होठों तक ही सीमित रहता है। ऐसे

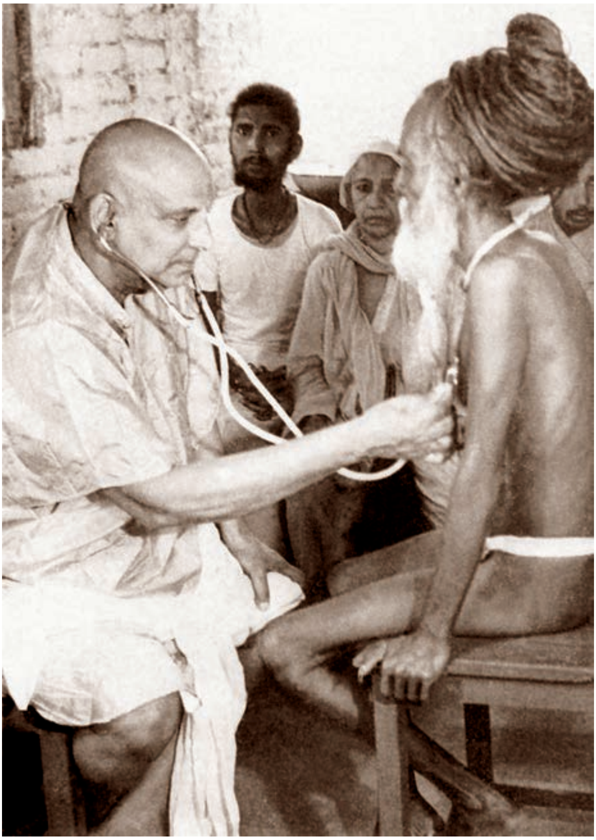

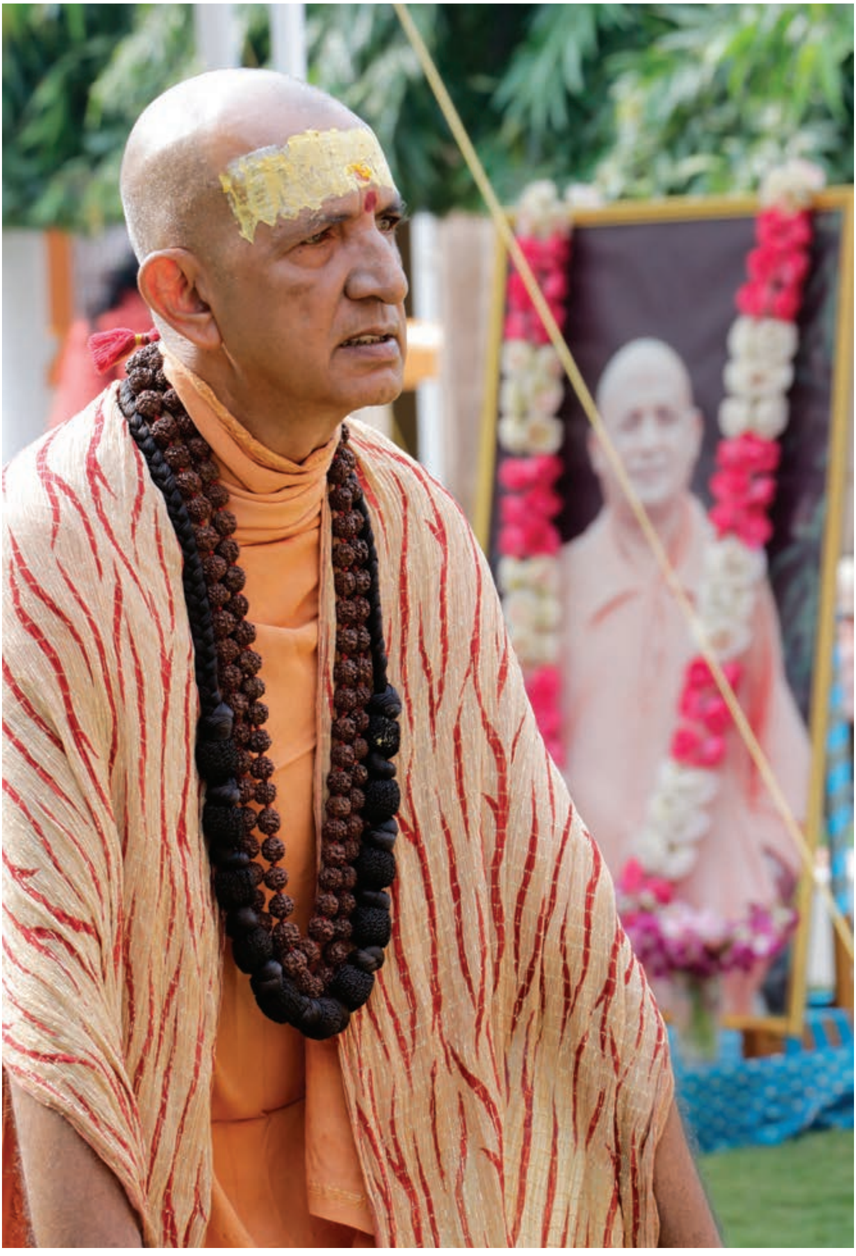

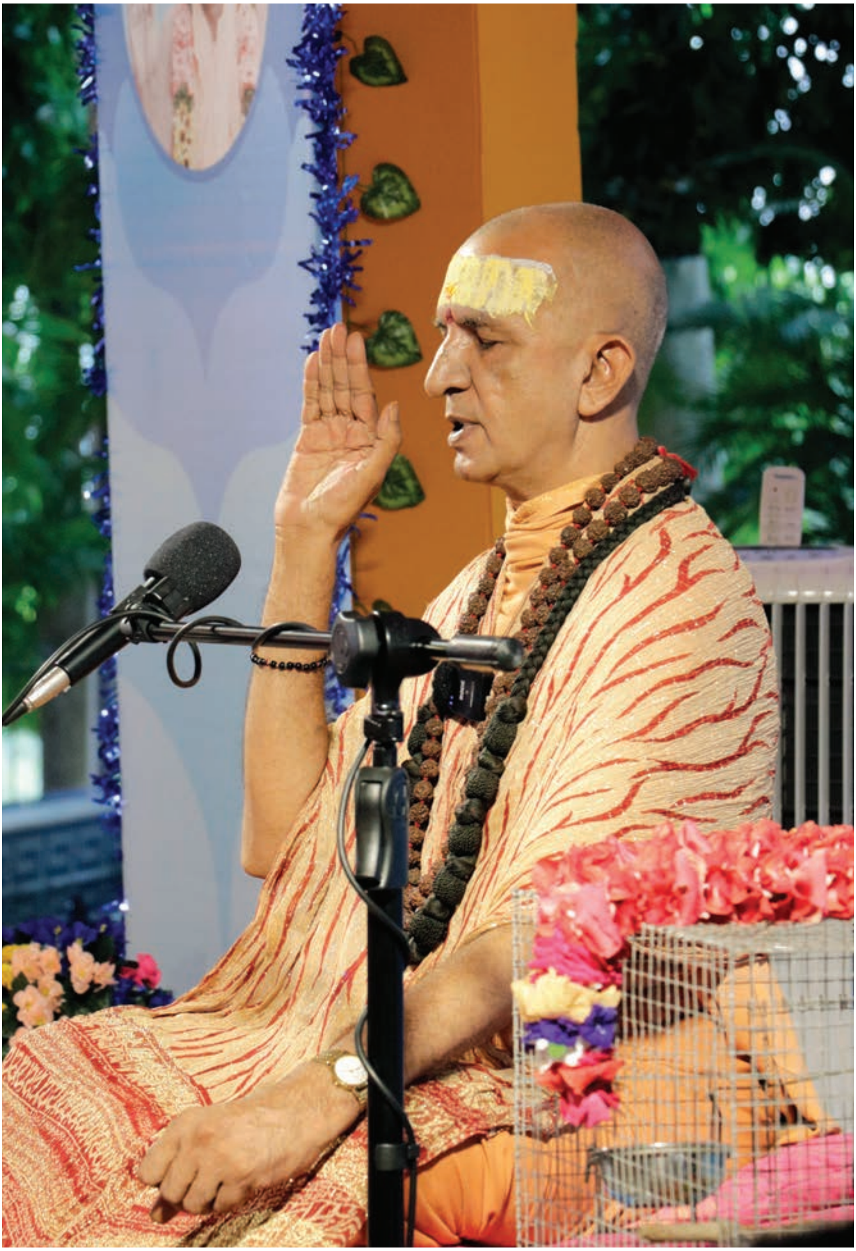

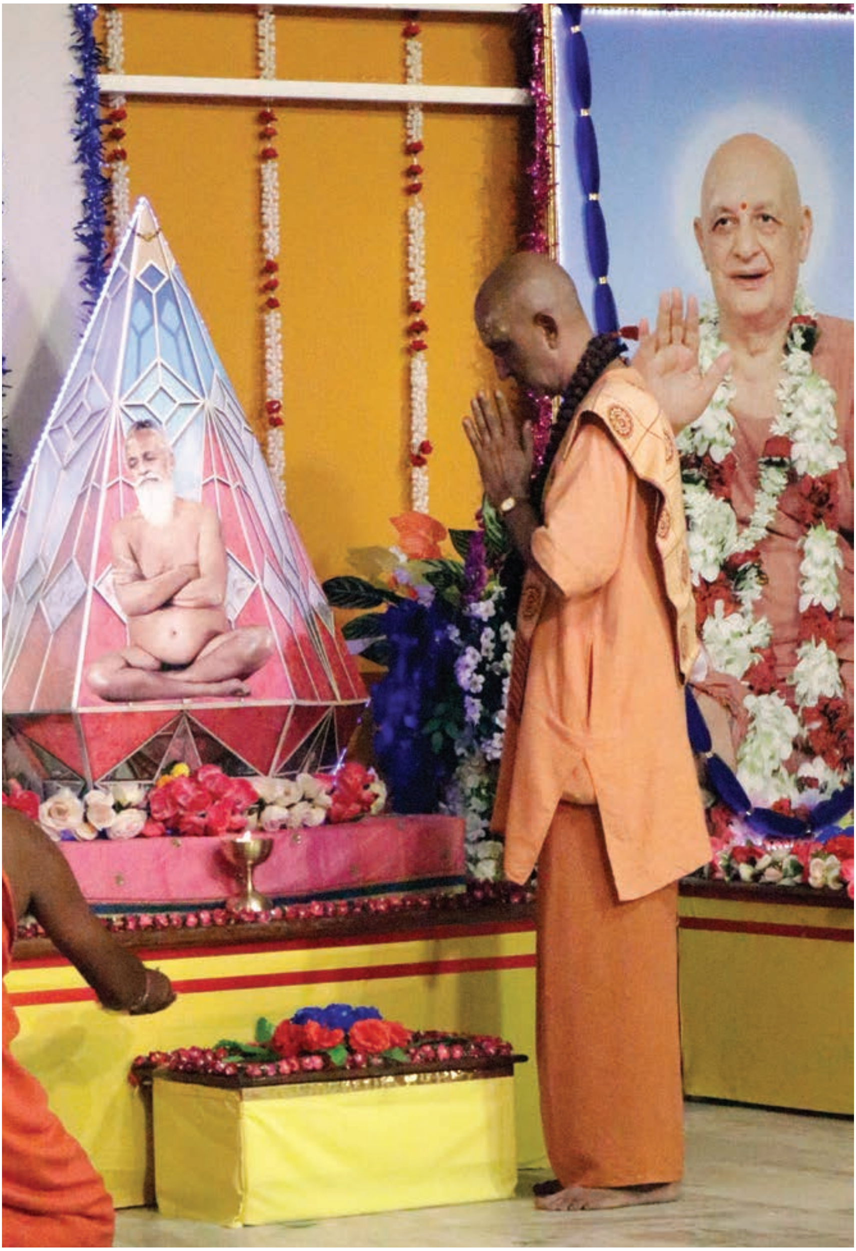

ओष्ठ-वेदान्ती कभी अपनी साधना में सफल नहीं हो सकते। आवश्यकता है व्यावहारिक वेदान्त की, जो अनवरत निष्काम सेवा द्वारा ही सिद्ध होता है।

कर्मयोग के अभ्यास में अपने पूरे मन, हृदय और आत्मा को कार्य करने में समर्पित कर देना चाहिए। यह अति आवश्यक है। बेमन से की गई सेवा, सेवा नहीं कहलाती। कई लोगों का शरीर एक स्थान में, मन दूसरी जगह तथा भावना कहीं और होती है। यही कारण है कि उन्हें इस मार्ग में पर्याप्त उन्नति प्राप्त नहीं होती। मन का ढाँचा कुछ ऐसा बना है कि एक छोटे-से काम के भी प्रतिफल की अपेक्षा करता है। जब आप मुस्कुराते हैं तो अपने मित्र से मुस्कुराहट की अपेक्षा करते हैं। जब आप अपने हाथों से अभिवादन करते हैं तो दूसरे लोगों से भी अभिवादन की अपेक्षा करते है। जब आप किसी को एक गिलास पानी भी देते हैं तो उससे कृतज्ञता की अपेक्षा करते हैं। जब आपका ऐसा हाल है तो आप निष्काम कर्मयोग कैसे कर सकते हैं?

जो लोग कर्मयोग का मार्ग अपनाते हैं, उन्हें प्रत्येक कार्य को मात्र कर्तव्य की भावना से करना चाहिए। कर्मयोग के अभ्यास में दो सिद्धान्त महत्त्वपूर्ण हैं। पहला, कर्म के फल के प्रति अनासक्ति होनी चाहिए, दूसरा, अपने सभी कर्मों को ईश्वर के प्रति भक्ति भावना से समर्पित कर देना चाहिए। आसक्ति मृत्यु है जबकि अनासक्ति शाश्वत जीवन। अनासक्ति मनुष्य को पूर्णतया निडर बना देती है। जब आप अपने सभी कर्मों को प्रभु को समर्पित कर देते हैं तब स्वाभाविक रूप से आपमें भक्ति का विकास होता है। जितना अधिक आपका समर्पण होगा, उतना ही आप ईश्वर के निकट आयेंगे। धीरे-धीरे आप अनुभव करेंगे कि भगवान आपके शरीर तथा इन्द्रियों के माध्यम से प्रत्यक्ष रूप से कार्य कर रहे हैं। अब आपको कार्य करने में थकान अनुभव नहीं होगी। झूठे अहंकार का भारी बोझ हमेशा के लिए लुप्त हो जायेगा।

कर्मयोग का सिद्धान्त वेदान्त का अनिवार्य अंग है। यह जीवन तथा ब्रह्माण्ड की पहेली सुलझाता है। यह सभी को सान्त्वना, सन्तोष तथा प्रसन्नता प्रदान करता है। यह स्वयं-सिद्ध सत्य है, जिसे प्रत्येक समझदार व्यक्ति को स्वीकार करना चाहिए। 'जैसी करनी वैसी भरनी' – यह लोकोक्ति भौतिक स्तर पर ही नहीं, आध्यात्मिक स्तर पर भी लागू होती है। प्रत्येक विचार तथा कर्म आप में कुछ विशेष प्रवृत्तियों को उत्पन्न करता है जो आपके जीवन को प्रभावित करती हैं। यदि आप निष्काम भाव से कर्म करेंगे तो स्वाभाविक रूप से आनन्द तथा शान्ति प्राप्त करेंगे।

योग की संभावनाएँ

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

मनुष्य को तीन बातों ने बहुत कष्ट पहुँचा रखा है। शास्त्र उन्हें आधि, व्याधि और उपाधि कहते हैं। इन तीनों से मुक्त होने के लिए अनेक प्रकार के उपाय बतलाये गये हैं। व्याधि का मतलब शरीर व्याप्त रोग, आधि का मतलब मनोजात रोग और उपाधि का मतलब अविद्याजात रोग। इसमें जो व्याधि का विषय है उसके बारे में मैं ज्यादा नहीं बतलाऊँगा, क्योंकि उसके बारे में चिकित्सा विज्ञान में बहुत कार्य हुआ है। उन लोगों ने कई उपाय खोजे हैं। हाँ, मैं आप लोगों को यह बतलाऊँगा कि शरीर में दिखलायी देने वाली प्राय: सारी व्याधियाँ, आधि और उपाधि के कारण होती हैं।

मानसिक शुद्धि

जब तक शरीर शुद्ध नहीं होता, साधना आगे नहीं बढ़ सकती। जब तक मन शुद्ध नहीं होता, तब तक ध्यान आगे नहीं बढ़ सकता। योग-मार्ग में आगे बढ़ने के लिए पहले शारीरिक शुद्धि, फिर मानसिक शुद्धि आवश्यक है। मेरा विषय मन की शुद्धि का है। लोग समझते हैं कि बीमारी का कारण शरीर में छुपा है, किन्तु शास्त्र, विज्ञान और स्वानुभव के आधार पर बीमारियों का कारण हमें अपने मन की गहराइयों में खोजना है। स्थूल रूप में दिखलायी देने वाले रोग, जैसे ब्लडप्रेशर, अल्सर, प्रदर, हृदयरोग, अनिद्रा, हिस्टीरिया आदि का कारण रोगी मन ही है।

हम इन रोगों को शरीर की बीमारी मानने को तैयार नहीं हैं। यह बात ठीक है कि ये बीमारियाँ शरीर में दिखलायी देती हैं। ब्लडप्रेशर को यंत्र द्वारा नापा जा सकता है। शरीर इन रोगों का क्रीड़ा-स्थल है, किन्तु रोग का जो मूल कारण है, वह कहीं अन्यत्र है। मैं दूसरे का नहीं, अपना ही अनुभव बतलाता हूँ। मुझे अंधेरे में डर लगता था, यहाँ तक कि संन्यास के बाद भी मैं बत्ती जलाकर सोया करता था। एक दिन मुझे अचानक एक घटना का स्मरण हो आया और बिना किसी प्रयास के स्मृति ने मेरी सारी उपाधि का संवरण कर दिया।

घटना ऐसी थी कि जब मैं छोटा बच्चा था, मैं कुमाऊँ में रहता था। हमारे घर से सात-आठ मील दूर एक पहाड़ी नदी थी। वहाँ हम लोग एक बार

पिकनिक के लिए गये। सब नहा रहे थे, मेरे को भी जबरदस्ती धक्का दिया गया। मेरे पिताजी ने पकड़कर मुझे पानी में डुबा दिया। उस समय, एक क्षण के लिए जो अंधकार मेरी आँखों के सामने छाया, वह मेरे जीवन के साथ जुड़ गया। मगर प्रकट हुआ 25 साल बाद। जैसे ही मैं 25 वर्ष का हुआ, मेरे अन्दर कायिक परिवर्तन होने लगे, मनोवैज्ञानिक और भावनात्मक परिवर्तन होने लगे। मेरे शरीर में कुछ तत्त्वों का विनाश हुआ। उस समय वह दबी हुई कुण्ठा प्रकट हुई! मुझे शाम को ऐसा भारीपन लगता था कि क्या करें, क्या न करें, कुछ समझ में नहीं आता था। गंगा किनारे जाकर नहाने का मन करता था! वह घटना एक दिन स्वप्न की अवस्था में प्रकट हुई। स्वप्न की अवस्था में मैंने पूरी घटना को, जैसी हुई थी, वैसे ही देखा। स्वप्न में जब मैं देख रहा था कि पिताजी ने मुझे पानी में डुबाया तब मेरी नींद खुल गई, और उस दिन के बाद से मेरी सारी समस्या ही जाती रही। यदि वह स्वप्न मुझे न दिखता, तो मेरा जीवन कुछ और ही होता।

बचपन से अधेड़ अवस्था तक की जो घटनायें हमारे जीवन में होती हैं, उनके प्रभावों को हम मन से निकाल नहीं पाते। वे सब प्रभाव हमारे कारण शरीर में और विचारों की तह में जमते जाते हैं। एक उम्र ऐसी आती है जब ये सब जमे हुए संस्कार शरीर के माध्यम से निकलते हैं। किसी में गैस्ट्रिक समस्या के रूप में निकलते हैं, किसी में ब्लडप्रेशर के रूप में। मैं आपको बतला दूँ, गैस्ट्रिक के जितने भी रोग हैं, एक ही जैसे मालूम पड़ते हैं। वे मनोकायिक समूह के रोग कहलाते हैं। आज जितनी भी बीमारियाँ हैं, उनमें 90% मनोकायिक मूल की होती हैं। डॉक्टर दवाई देता जा रहा है, आप लेते

जा रहे हैं, फिर भी बीमारी वहीं की वहीं है। डॉक्टर लोग मशीनों में बीमारी को देख रहे हैं, मगर बीमारी वहाँ है ही नहीं जहाँ दिखलायी दे रही है। बीमारी का वास्तविक कारण है मन।

मनुष्य अपने स्वभाव के कारण अपने मन में रोग निर्माण करता है। यही आज मेरा विषय है। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी बीमारी के कारणों को पहले जानकर तब उसके निदान में प्रवृत्त होना चाहिए। रोग की जो रूढ़िवादी व्याख्या हम लोगों में प्रचलित है, उसे मैं अंतिम वाक्य नहीं मानता। यह डायबिटीज होती क्यों है? कहते हैं, वह आदमी मेहनत नहीं करता, शुगर और स्टार्च बहुत खाता है, इसलिए होती है। कोई कहता है, बहुत चिंतित रहता है, इसलिए होती है।

यह बात अपनी जगह ठीक है, मगर रोग का मूल कारण डॉक्टर नहीं खोज सकता, वैद्य नहीं खोज सकता, रोगी को स्वयं ही इसे खोजना होगा। उस कारण को मन की गहराई से निकाल कर, उखाड़ कर लाना होगा। इसको कहते हैं, 'सूक्ष्म शरीर को खोलना' और उसको खोलने का तरीका है – चित्त को एकाग्र करना। इस बात को ठीक से समझना होगा।

मन की चंचलता

साधक हमारे पास आते हैं, कहते हैं, 'हम जब ध्यान करते हैं, हमारा मन बहुत चंचल रहता है, उसे रोक दीजिये।' मैं कहता हूँ, 'क्यों रोकोगे उसको? चित्त को चंचल रहना है, उसे चंचल रहने दो। यही स्वस्थ होने का तरीका है और चित्त को रोकना अस्वस्थ होने की विधि है।' चित्त की यह चंचलता है क्या? मैं समझाता हूँ – जैसे हम इस हॉल में बैठे हैं। कोई बदबू नहीं आ रही है। मान लो, बगल में खिड़की के नीचे कोई टट्टी कर दे। खिड़की खुली हो तो बदबू आयेगी ही। कमरे में अगरबत्ती जलाने से, मुँह पर क्रीम-पाउडर लगाने से भी नहीं जायेगी। जायेगी कब? जब तुम उसको हटाओगे।

उसी प्रकार चित्त की चंचलता से यह साबित होता है कि हमारे चित्त में कई प्रकार की दुविधायें, कुण्ठायें या अतीत की स्मृतियाँ ऊपर आना चाहती हैं और हम आने नहीं देते। इसके विषय में गीता में एक श्लोक है –

यतो यतो निश्चरति मनश्चञ्चलमस्थिरम्।
ततस्ततो नियम्यैतदात्मन्येव वशं नयेत्॥6.26॥

जब-जब तुम्हारा मन चंचल हो, उसे पकड़ कर नियंत्रण में करो। ध्यान रखिये, साधक अनेक श्रेणी के होते हैं। हम जिन साधकों की बात कर रहे हैं, वे रोगी हैं। अतः चित्त को एकाग्र करते समय जब वे माला से, भ्रूमध्य में ध्यान द्वारा या मूलाधार में ताड़न क्रिया करके चित्त एकाग्र करने का प्रयत्न करते हैं, तब मन में बहुत बवण्डर उठते हैं, बड़े तूफान उठते हैं। मन एकदम चंचल हो जाता है। साधारण लोग, जो मनोविज्ञान नहीं जानते, वे घबरा जाते हैं और साधना ही छोड़ देते हैं। उनसे पूछो, 'साधना करते हो कि नहीं?' तो वे कहते हैं, 'नहीं, छोड़ दिया।' 'क्यों?' कहते हैं, 'मन ही नहीं लगता तो क्या करें?'

अंतर्मौन

साधना मन लगाने के लिए नहीं की जाती। साधना की जाती है उन संस्कारों को ऊपर निकालने के लिए जो तुम्हारे रोग, मोह व अज्ञान का कारण बने हुए हैं। इसी संदर्भ में योग की एक क्रिया के विषय में समझाऊँगा। अपने मंत्र-जप, प्राणायाम, चित्त को एकाग्र करने के अभ्यास में अंतर्मौन को जोड़ दो। ध्यान की अवस्था में चित्त का चंचल होना स्वाभाविक है। चित्त का चंचल न होना अस्वाभाविक है। चित्त चंचल क्यों नहीं होगा? चित्त सतोगुण, रजोगुण और तमोगुण से निर्मित है। उसका स्वभाव बंदर की तरह है। बंदर कभी शांत नहीं बैठता, अगर बैठ गया, तो समझना या तो मर गया या बीमार है।

अंतर्मौन में हम लोग दो क्रियायें एक साथ करते हैं – हाथ में माला ले लेते हैं या चित्त को किसी चक्र पर स्थिर कर लेते हैं। चाहो तो अनाहत पर करो, मणिपुर पर करो, भ्रूमध्य पर करो या मूलाधार में लगा दो। जैसे-जैसे चित्त इस चक्र पर थमने लग जायेगा, वैसे-वैसे पुरानी बातें याद आयेंगी और चित्त बादल की तरह कभी इधर तो कभी उधर भागेगा। मन में सद्भाव से लेकर दुर्भाव तक, मोक्ष की भावना से लेकर वासना तक, परोपकार तथा सत्यं-शिवं-सुन्दरं से लेकर अश्लील तक, सब तरह के विचार आयेंगे। ये केवल विचार के रूप में नहीं आते। कभी चित्र बन कर आते हैं, कभी-कभी मन इनमें रम जाता है। कभी जबरदस्त चिन्ता का विचार उठता है। तब साधक इन विचारों को रोकते हैं। मूलबंध लगाकर रोकते हैं। ॐ नमः शिवाय, ॐ नमः शिवाय करने लग जाते हैं। उस समय मन में जो विचार उठते हैं, उन्हें वे बल के साथ रोकते हैं। तो होता क्या है? उनको कई चित्र दिखने लग जाते हैं, अंतरंग दृश्य। साधक इन्हीं को अनुभव कहते हैं।

ये अनुभव नहीं, विकल्प हैं। आपने तीन शब्द सुने होंगे – विचार, विक्षेप और विकल्प। जब मन में पुरानी बातें आती हैं, नवीन बातें आती हैं, तब उसको कहते हैं विचार। हम उसको जब रोकते हैं तब वह सुन्दर स्वप्न का रूप धारण करके, कभी-कभी ब्लैक एण्ड व्हाईट पिक्चर की तरह और कभी टेक्नीकॅलर में आता है। ये क्या हैं? अपने विचारों को दबाया था, वे दूसरे रास्ते से निकलने लगते हैं। अगर आप नाली को बंद कर देंगे तो पानी दूसरे रास्ते से बहने लगेगा। जब हम अपने विचारों को, अपने कर्मों को, अपने संस्कारों को, चित्त के बीजों को, विचारों की भूमिका में अंतर्मौन की क्रिया द्वारा प्रत्यक्ष नहीं होने देते हैं और ध्यान द्वारा जबरदस्ती नियन्त्रित करते हैं तब चित्त लय अवस्था में जाकर पुनः उन्हीं संस्कारों को ग्रहण कर लेता है।

अगर साधक मजबूत है और मान लो, उसे विकल्प नहीं हुआ, संकल्प नहीं उठे और उसे ध्यान में कोई अनुभव न हुए, तो इन्हें भी आध्यात्मिक अनुभव नहीं कह सकते। ये चित्त की अस्थिर भूमि की अभिव्यक्तियाँ हैं। ये भी न हुए तो क्या होता है? बीमारी होती है, तनाव उत्पन्न होते हैं। किसी का सिर घूम रहा है, किसी को माइग्रेन हो जाता है, मिर्गी का दौरा आ जाता है। कई लोगों को तो पागल तक होते देखा गया है और एक ही दिन में ठीक होते भी देखा गया है। ये रोग हमारे संस्कारों व कर्मों के सड़े हुए रूप हैं।

अन्तर्मौन में विचारों को उठने देते हैं। मैं विचार करने वाला नहीं हूँ, मैं विचारों का कर्ता नहीं हूँ, भोक्ता नहीं हूँ, मात्र इनका साक्षी हूँ। मैं विचार नहीं करता। आप गहराई में जायेंगे तो देखेंगे, मैं विचार करता ही नहीं हूँ। आप सिर्फ सोचिये कि क्या मैं विचार करता हूँ, तो आपको मालूम पड़ेगा मनुष्य विचार नहीं करता। मनुष्य को मालूम नहीं कि कैसे सोचें, मनुष्य को सोचना नहीं आता। फिर वह सोचता क्यों है? इसलिए कि उसके अन्दर सोचने की मशीन ऑन करके फिट कर दी गयी है। वह चाहेगा तो भी सोचेगा, नहीं चाहेगा तो भी सोचेगा। वह अनुरक्त रहेगा तो भी सोचेगा, समायुक्त रहेगा तो भी सोचेगा।

चेतना और विचार, ये दोनों अलग-अलग हैं। एक तो मैं सोचता हूँ और दूसरा मैं जानता हूँ कि मैं सोचता हूँ। अन्तर्मौन में हम चेतना को विचार से अलग कर लेते हैं और चेतना को साक्षी बना लेते हैं। संकल्प-विकल्प को हम विचार कहते हैं। थोड़ी देर के लिए विचार शब्द को हटा दो, संकल्प और विकल्प बोलो। जो घट गया है, वह चित्त के द्वारा, जो हो रहा है, वह संकल्प-विकल्प के रूप में और जो होने वाला है, वह बुद्धि के द्वारा ग्रहण होता है।

आपके विचारों का स्वरूप क्या है – चिंतनात्मक, संगीतात्मक, परम्परात्मक या भावनात्मक? साधारणतः हम भावनात्मक रूप में सोचते हैं – यह आदमी चोर है, यह अच्छा है, वह बुरा है। जो कुछ हम सोचते हैं, वह भावनात्मक होता है। हमारे पास अपने विचारों के स्वरूप का भी विवरण नहीं है। ये जो संकल्प-विकल्प हैं, उनके प्रकाशनों की प्रतिक्रिया को हमको अन्तर्मौन में देखना है।

एक आदमी अंतर्मौन कर रहा था। पहली अवस्था गुजर गयी, दूसरी अवस्था गुजर गयी। उसको ऐसा लगा कि उसके विचार मालगाड़ी की तरह मन के स्टेशन तक पहुँचते जा रहे हैं। दूसरे आदमी को अन्तर्मौन में ऐसा दिखलायी दिया कि उसके विचार बादलों की तरह मण्डरा रहे हैं। अंतर्मौन में अपने विचारों की क्रिया को अनुभव करना है। जब हम इस अवस्था में जाते हैं, जब हमें मालूम पड़ता है कि विचार कैसे हैं, तब जाकर वास्तव में योगाभ्यास प्रारंभ होता है।

आत्म-साक्षात्कार की बातें तो सभी करते हैं। शास्त्रों में इसके विषय में जो लिखा है, उसको भी बतलाया जा सकता है। मगर एक बात बतला दूँ, जब तक भूमि तैयार नहीं होती, बीज बोना बेकार है। शरीर एक भूमि है, मन दूसरी भूमि है और आत्मा तीसरी भूमि है। इसीलिए योगशास्त्र में अन्तर्मौन को इतना महत्त्व दिया गया है। कहते हैं, जप करते जाओ और मन जहाँ जाना चाहे, जाने दो। धीरे-धीरे मन अपने-आप अस्त हो जायेगा। आपको एक उदाहरण

बतलाऊँ, फ्रांस में मेरे एक मित्र थे। अब तो वे शिष्य हैं। वे अपने एक विशिष्ट रोग के कारण बहुत परेशान थे। इस परेशानी के कारण उन्होंने अपना सारा कारोबार बंद कर दिया। उनकी एक बहन है। वह योग में बहुत रुचि रखती है। वे उसके यहाँ गये थे। उसने उन्हें एक क्रिया बतलायी। कहा, 'भ्रूमध्य में ज्योति का ध्यान करो।' उन्होंने वैसा ही करना प्रारंभ किया। उन्हीं का कहना है, 'एक दिन ध्यान करते समय मुझे अन्दर में एक जोर की आवाज मालूम पड़ी और मेरा रोग ही गायब हो गया।' उन्हें था हाइड्रोसील और हर्निया। वह कैसे ठीक हो गया, कहना मुश्किल है।

मनुष्य का मन उसके जीवन का सबसे प्रभावशाली साधन है, इसको भूलना नहीं। हमारे पारिवारिक जीवन में जो रोज आने वाली परेशानियाँ हैं, विभीषिकायें हैं, परस्पर के सम्बन्धों में जो तनाव हैं या शरीर के रोग हैं, उनके कारणों को आप बाहर मत खोजो। उनके कारणों को आप अपने अंदर खोजो। और जब अपने अंदर खोजते हो, तो खोजना होगा मन में। मगर यह खोज बच्चों का खेल नहीं है। मन को जानना सरल नहीं है। मैंने बोल दिया, आपने सुन लिया और कहा कि हाँ, मन को जानना चाहिए। मन को जानने के लिए योग दर्शन लिखा गया। महर्षि पतंजलि ने योग सूत्रों में कहा है, 'चित्त की वृत्तियों को रोकना योग है।' यह कितना कठिन काम है! योगशास्त्र में जब हम आत्म-साक्षात्कार की बात करते हैं, आत्मज्ञान, समाधि-लाभ, कैवल्य-लाभ की बात करते हैं, तो हमें जानना होगा कि इन सब की लालसा में हम यह न भूलें कि हमने बहुत-सी सीमाओं को बनाकर रखा है। उनसे ऊपर उठना होगा।

व्यावहारिक योग

बहुत-सी माताओं को देखा, बहुत-से सत्संगियों को देखा, वे *'अहं ब्रह्मास्मि, तत्त्वमसि'* कहते रहते हैं। रामानुज, शंकराचार्य के भाष्य पढ़ लेते हैं। उन्हें लगने लगता है कि वे ब्रह्म हैं। मगर यह अहंग्रस्त उपासना तब तक सफल नहीं होती जब-तक वे चित्त शुद्ध नहीं कर लेते। जब बहिर्भाव नष्ट हो जाता है, तब हमें अपने अंदर एक विस्तार का अनुभव होता है। जिस तरह नमक का एक ढेला समुद्र में मिलकर व्यापक हो जाता है, उसी प्रकार हमारी यह चेतना देहादि के बंधनों को तोड़ देती है, तब यह बन जाती है, *अहं ब्रह्मास्मि*। देह की चेतना में जब तक हम लिपटे हैं, तब तक न *अहं ब्रह्मास्मि* कहने का कोई मतलब है और न ज्ञान की बात करने का।

योग में आत्मज्ञान की प्राप्ति हेतु जितनी बातें हम लोगों के सामने रखी गयी हैं, वे प्रारंभिक उपचार के रूप में हैं। हम शरीर और मन को शुद्ध व रोगरहित करते हैं। शास्त्रों में लिखा है – कर्मयोग, भक्तियोग, राजयोग और फिर ज्ञानयोग का अभ्यास होना चाहिए। इन चारों के समन्वित अभ्यास को हम 'समन्वयात्मक योग' कहते हैं। केवल योग की एक दिशा को लेने से काम नहीं चलता। मैं चाहता हूँ कि आप लोग योग पर चिंतन करो, चाहे उपचार के रूप में करो, चाहे मनोविज्ञान के रूप में करो। यह कोई साधारण विज्ञान नहीं है, यह बहुत विस्तृत ज्ञान है। मैं आज 1978 में यह बात बतला रहा हूँ, 20-25 वर्षों में आप देखेंगे कि योग एक विज्ञान, एक विद्या और फैकल्टी के रूप में सामने आयेगा। भारत के लोगों को बहुत कुछ करना है। अगर वे नहीं करेंगे, तो बाहर के लोग आयेंगे और हो सकता है, वे वहीं से योग को यहाँ लायें। यह भी संभव है कि वे योग की डिग्री धारण करें। ऐसा दृश्य हम नहीं देखना चाहते। और हो सकता है हमारी जनता, हमारी सरकार भी इस प्रोग्राम को हाथ में ले ले। इसके लिए समर्पण व लगन के साथ काम करने की जरूरत है।

दुनिया की सब संस्कृतियाँ एक तरफ हैं और योग एक तरफ, क्योंकि यह मनुष्य को विशाल चैतन्य का ज्ञान कराती है। इसके विषय में श्री अरविंद ने लिखा है, आदि गुरु शंकराचार्य ने लिखा है, कई संत-महात्मा भी लिखकर चले गये हैं। आँखों से दिखता नहीं है, मन को समझ में नहीं आता। इस विषय को जानने व अनुभव करने के लिए संत-महात्मा हमारी सहायता करते आये हैं। यह भी बतला देता हूँ कि यूरोप में योग व्यवस्थाबद्ध हो चुका है। इतना व्यवस्थाबद्ध हो चुका है जितना शायद अपने यहाँ प्रचलित शिक्षा भी नहीं हुई है। यह सब सोचने के लिए आपको विवश होना चाहिए। दिल्ली से कन्याकुमारी तक, जहाँ मैं जाता हूँ यही बात कहता हूँ।

पश्चिम में योग, प्राणायाम, चक्र आदि पर हर योगशास्त्र को निश्चित कर दिया है। आज से दो वर्ष पूर्व यूरोप में योग शिक्षकों का एक सम्मेलन हुआ था। दो-तीन हजार शिक्षकों में एक बात को लेकर तीन दिनों तक वाद-विवाद चलता रहा। बात छोटी-सी थी। एक भारतीय योगी ने कोई पुस्तक लिखी। उसने लिख दिया, प्राणायाम करते समय पेट को नहीं, छाती को फुलाना चाहिए। जब मैं वहाँ गया, तब उन्होंने वह प्रश्न मुझसे किया। मैंने कहा, 'योग के बारे में मेरी राय जानने से कोई लाभ नहीं, योग के बारे में शास्त्र की राय जानो।' शास्त्र कहता है, 'वायु से पेट को भरो', बस हो गया निर्णय। कहने का

यही मतलब है कि वे लोग योग की एक-एक क्रिया की इतनी गहराई में जा रहे हैं कि ध्यान की अवस्थाओं में शरीर के तंत्रों को जाँच कर ध्यानयोगी के लिए आहार का निर्णय करते हैं। हो सकता है, 15-20 वर्षों में वे लोग हमें सिखाने के लिए आ जायें।

आप लोग बहुत बड़ी संस्कृति के वारिस हैं। आप किसी राजनैतिक संस्कृति के नहीं, एक आध्यात्मिक संस्कृति के वारिस हैं। अब तक इसे किसी तरह गुप्त रखा गया था। अब यह विद्या आप लोगों के सामने प्रत्यक्ष हो रही है। मगर याद रखें, हमारे एक व्याख्यान देने से आपको ज्ञान नहीं हो सकता। इसके लिए आपको बहुत गहराई में जाना होगा। संक्षेप में इतना ही कह सकता हूँ कि आधि, व्याधि और उपाधि, ये जो तीन दोष मनुष्य के जीवन में हैं, इनको दूर करने के लिए कोई रास्ता मनुष्य के पास है कि नहीं, यह मैं नहीं जानता, मगर निश्चित रूप से योग के पास है।

मनुष्य के जीवन की एक बहुत बड़ी समस्या है, रचनात्मक शक्ति का उदय। मनुष्य कैसे रचनात्मक बने? इसके लिए भी योग हमारी प्रतिभाओं के दरवाजे खोल सकता है और मस्तिष्क के उस भाग को क्रियाशील बना सकता है, जो भाग अभी तक सुषुप्त अवस्था में है और निद्रा में विलीन है। उसको आप लोगों ने सुपरसोनिक या अल्ट्रासोनिक या परा-मनोविज्ञान या जागरूकता आदि नाम दे रखे हैं। हम उसे कहते हैं, 'ऋतम्भरा प्रज्ञा' या 'योग चेतना'। ऋतम्भरा नाम की जो सुषुप्त प्रतिभा है, वह मनुष्य के मस्तिष्क के साथ सम्बद्ध है। जैसे-जैसे मनुष्य के मस्तिष्क का विकास होता जायेगा, वैसे-वैसे यह प्रतिभा विकसित होती जायेगी। इस विकास का जो शक्तिशाली साधन है, वह कुण्डलिनी योग है। कुण्डलिनी योग मस्तिष्क को जाग्रत करने का साधन है। यह अतीन्द्रिय प्रतिभाओं को उत्पन्न करने की पद्धति है। इस योग में इतनी सम्भावनायें हैं कि यह न केवल अविद्या को दूर करता है, बल्कि मनुष्य को पूर्ण समर्थ भी बना सकता है। इस विषय को समझने के लिए हम लोग धीरे-धीरे आगे बढ़ें और उन्नति की, विकास की सम्भावनाओं के द्वार को खोलें।

– 6 मार्च 1978, पुणे

सत्यानंद योग अकादमी – कोलोम्बिया

सरकारी कर्मचारियों के लिए

तीन संस्थाओं के सरकारी कर्मचारियों के लिए 6 महीने का सत्र शुरू किया गया है। ये सभी कर्मचारी नागरिक सेवाएँ प्रदान करने के क्षेत्र में संलग्न हैं जहाँ अत्यधिक तनाव की वजह से 'बर्न आउट सिंड्रोम' बढ़ रहा है। ये तीन वर्ग हैं –

- घृणा और लैंगिक अपराध हॉटलाइन पर बैठने वाले कॉल सेंटर एजेंट
- विकलांग रोगियों की देखभाल करने वाले कर्मचारी
- स्कूली बच्चों में सड़क जागरूकता और शिक्षा से संबंधित नागरिक यातायात अधिकारी

सत्र में भाग लेने के लिए 47 आवेदन प्राप्त हुए और पहले 2 सत्रों में 35 लोगों ने भाग लिया। कार्यक्रम तीन स्तंभों पर आधारित है –

- स्वान तकनीक, कर्म योग और सेवा पर आधारित यौगिक दर्शन और जीवन शैली शिक्षण के माध्यम से व्यक्तिगत विकास।
- एफ.एफ.एच. (फॉर फ्रंटलाईन हीरोज़) नामक एप्प के माध्यम से दैनिक योग अभ्यास।
- सत्र के दौरान सीखी गई सबसे प्रासंगिक और प्रभावशाली विधियों को दूसरों के साथ साझा करने की प्रतिबद्धता, जिससे ज्ञान कई गुना बढ़ जाए।

प्रारंभिक सत्र से ही पाया गया कि प्रतिभागियों ने अपने नए ज्ञान को अपनी संस्थाओं के अन्य सदस्यों के साथ साझा करना शुरू कर दिया। सिविल ट्रैफिक अधिकारियों ने अपनी टीम के लिए मध्याह्न के समय विश्रान्ति और ध्यान कैप्सूल संचालित किये। कॉल सेंटर के एजेंटों ने अपने साथियों के लिए दोपहर में तनाव मुक्ति गतिविधियों का संचालन किया, और देखभाल करने वाले कर्मचारियों ने रोगियों और उनके परिवार के सदस्यों को अभ्यास सिखाने शुरू किये।

इस कार्यक्रम में नियमित शिक्षकों के अलावा यौगिक अध्ययन के विद्यार्थी भी अपना योगदान देते हैं। वे हर सप्ताह प्रतिभागियों से मिलकर उनके प्रश्नों और जरूरतों का समाधान करते हैं। हाल में घटी एक हिंसक वारदात के बाद अनेक प्रतिभागियों के लिए वर्चुअल कक्षा आयोजित की गयी ताकि वे घटना से उपजे तनाव से निपट सकें। यहाँ प्रतिभागियों के कुछ अनुभव साझा किये जा रहे हैं –

- बहुत बढ़िया, मैंने ठीक से सांस लेना सीख लिया और यह मेरे जीवन का आधारस्तम्भ है।
- जब मुझे किसी व्यक्ति को ट्रैफिक चालान काटना होता है तो ये तकनीकें मेरे लिए बहुत उपयोगी साबित होती हैं। पहली चीज जो मैं करता हूँ, वह है अपनी सांसों के प्रति सजग रहना। यह मुझे तुरन्त शांत कर देता है और मैं आराम से उस व्यक्ति के पास जा पाता हूँ।
- यदि हम स्वस्थ शरीर और दिमाग चाहते हैं, तो हमें इसकी देखभाल वैसे ही करनी होगी जैसे हम अपनी बढ़िया मोटर गाड़ी की करते हैं। अपने शिक्षकों की प्रेरक संगति में सीखते हुए हम जान गये हैं कि हम अकेले नहीं हैं।

सामुदायिक गतिविधियाँ

यौगिक अभियान की शुरुआत के बाद से अकादमी ने सामान्य लोगों के योगक्षेम के लिए अनेक गतिविधियों, सत्रों और शैक्षणिक कार्यक्रमों का आयोजन किया है।

- 'योग एवं भावनाओं का प्रबंधन' विषय पर डेढ़ घंटे का व्याख्यान और प्रश्नोत्तर सत्र आयोजित किया गया। सत्र के दौरान डॉ. एंजेला हर्नांडेज़ ने पारंपरिक मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से और श्री इग्नासियो कोपेते ने यौगिक

दृष्टिकोण से इस विषय पर विश्लेषणात्मक चर्चा की। अन्त में श्रोताओं को दर्शाया गया कि किस प्रकार इन दोनों विचारधाराओं में अनेक समानताएँ हैं।

- श्रीमती मारिया तेरेसा वालेंसिया दे कोपेते के नेतृत्व में समोसे और इमली की चटनी बनाने की दो घंटे की कुकिंग क्लास आयोजित की गयी।
- श्रीमती क्लाउडिया श्मिट के नेतृत्व में बिहार योग विद्यालय के कार्यक्रम के अनुसार हर महीने की 4, 5 और 6 तारीख को गुरु भक्ति योग कार्यक्रम आयोजित किया गया।

योग पर्यावरण विज्ञान

- अकादमी ने पर्यावरण संबंधी एक शैक्षणिक कार्यक्रम शुरू किया है, जिसका उद्देश्य शहरी वातावरण में उपज वृद्धि के संबंध में जागरूकता और ज्ञान बढ़ाना है।
- इस परियोजना के लिए केंद्र की एक बालकनी में एक हाइड्रोपोनिक वनस्पति उद्यान बनाया जाएगा। यह दूसरों को भी अपने घरों में ऐसा करने के लिए प्रेरक का कार्य करेगा।
- इस परियोजना के लिए आर्थिक संसाधन जुटाने तथा साथ ही शहरी पर्यावरण बचाने के लिए बोगोता शहर के बाहरी इलाकों में वृक्षारोपण कार्यक्रम आयोजित किए जा रहे हैं। मई में छोटे बच्चों सहित 30 से अधिक लोगों के समूह ने 60 पेड़ लगाए। वृक्षारोपण कार्यक्रम के बाद हवन, कीर्तन और भोज हुआ।

दान

अकादमी के विद्यार्थियों और भक्तों को अभावग्रस्त लोगों के लिए सामान दान करने के लिए प्रोत्साहित किया जा रहा है। मई में खाद्य सामग्री एकत्र की गयी और जून में स्कूली सामान।

सच्चा शिष्यत्व

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

शिष्यगण अपनी श्रद्धा व्यक्त करते हुए प्राय: कह देते हैं, 'मेरे गुरु महान् थे, संत थे, ज्ञानी थे।' इस प्रकार गुणगान तो बहुत कर देते हैं, लेकिन जो लोग अपने आपको शिष्य मानते हैं, उनसे हमारा एक प्रश्न है, 'उन्होंने अपने गुरु के आचरण से क्या सीखा है, क्या अपनाया है, और क्या जीया है?'

मेरा यह प्रश्न हर व्यक्ति से है, चाहे उसके गुरु स्वामी शिवानंद जी हों, श्री स्वामीजी हों, हम हों या कोई भी हो। क्या गुरु की शिक्षा केवल आसन-प्राणायाम तक सीमित है? क्या गुरु का काम केवल आपकी समस्याओं का निदान करना है, ताकि फिर से जाकर कुएँ में कूदो? कूदोगे और चिल्लाओगे, 'गुरुजी बचाओ।' गुरुजी आते हैं, निकालते हैं, फिर कूदते हो कुएँ में, जिंदगीभर यही क्रम चलता है। क्या इसीलिए गुरु बनाते हो कि वे आपकी बीमारी दूर कर दें? आपकी समस्याओं का समाधान कर दें? या एक प्रेरणा प्राप्त करने के लिये गुरु बनाते हो, जो जीवन में आपको आगे बढ़ाए? अगर अपने स्वार्थ के लिए गुरु बनाते हो, तो आपका शिष्यत्व अधूरा है। लेकिन अगर गुरु के आदर्शों को अपने जीवन में आत्मसात् करने का एक प्रतिशत भी प्रयास करते हो, तो सच्चे शिष्य हो।

संतों और गुरुओं को आदर्श माना जाता है। उनकी पूजा होती है और लोग कहते हैं कि हम ऐसे गुरु के शिष्य हैं। लेकिन क्या आपने गुरु के किसी आदर्श, किसी सिद्धान्त को अपने जीवन में अपनाया है? क्या अपने आपको वश में रखते हुए, नियंत्रण में रखते हुए कभी उनके इच्छानुसार चलने का प्रयास किया है? या किसी की परवाह किये बिना, अपने ही मानसिक पागलपन की अवस्था में बहे जा रहे हैं?

स्वामी शिवानंद जी अपने शिष्य, स्वामी सत्यानंद जी के बारे में लिखते हैं कि ये नचिकेता तत्त्व से ओत-प्रोत हैं। आपने कभी विचार किया कि नचिकेता तत्त्व क्या है? उससे ओत-प्रोत होने का अर्थ क्या होता है? नचिकेता को कहानी का पात्र भर समझते हो, नचिकेता तत्त्व का अर्थ लगाने का प्रयास कभी नहीं करते।

नचिकेता तत्त्व चरित्र और व्यक्तित्व की एक विलक्षणता है, गुरु को गर्व होता है कि मेरे शिष्य में यह आदर्श है, मेरे शिष्य का यह सिद्धांत है, मेरे शिष्य की यह क्षमता है। गुरु जब अपने आप को गौरवान्वित अनुभव करता है तब शिष्य के प्रति अपने उद्गार व्यक्त कर देता है। इतिहास में शायद पहली बार गुरु ने अपने शिष्य के बारे में अपने हृदय के उद्गारों को इस प्रकार व्यक्त किया है। हमेशा शिष्य गुरु के बारे में बोलता है, पहली बार गुरु ने शिष्य के बारे में कहा है।

नचिकेता तत्त्व का क्या अर्थ होता है, इस पर सोचो। यह जानने और समझने का प्रयास करो कि हम अपने गुरु के किस आदर्श का आचरण कर पा रहे हैं। हम अपने गुरु की किस शिक्षा का पालन कर पा रहे हैं। कहीं ऐसा तो नहीं कि अपने मानसिक पागलपन के प्रवाह में सभी को दुलत्ती मारते हुए, अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए आगे बढ़ते जा रहे हैं? यह मेरा प्रश्न है, इसके बारे में आप स्वयं सोचना और स्वयं को उत्तर देना।

ऋषियों की विरासत

मनीषियों और संत-महात्माओं ने हमें बहुत-सी चीजें विरासत में दी हैं। हम अपने आप को उनकी संतान मानते हैं। लेकिन जो अपने आप को ऋषि-मुनि की संतान मानते हैं, मैं उनसे जानना चाहता हूँ कि उन्होंने अपने जीवन में उनके कौन-से संस्कार को अपनाया है। अगर आप कहते हो कि मैं ऋषि-मुनि की संतान हूँ तो मैं प्रश्न करता हूँ कि उनकी शिक्षाओं, जीवन, चरित्र और आदर्शों से आपने क्या सीखा है, क्या अपनाया है?

काम, क्रोध, लोभ, ईर्ष्या, द्वेष, घृणा, यह सब आपके पूर्वजों ने सिखाया है? संतों और ऋषियों ने सिखाया है? आप कहोगे, नहीं। फिर यह सब आया कहाँ से? इसलिये आया कि आप उनके निर्देशों का पालन नहीं कर पाए, उनके चरित्र का अनुसरण नहीं कर पाए, उनके आदर्शों और चिन्तनों को अपना नहीं पाए। हो सकता है आपके पूर्वज संत रहे हों, लेकिन आप संत नहीं हैं। यह कोई जरूरी नहीं कि संत का बेटा संत ही हो। संत का बेटा डाकू भी हो सकता है।

यहाँ पर सब डाकू बैठे हैं, जो एक-दूसरे का शोषण करते हैं, एक-दूसरे को प्रताड़ित करते हैं, एक-दूसरे की अमूल्य वस्तु का हरण करते हैं। जो कभी सकारात्मक सोच नहीं रख पाता, बल्कि जिसके मन की सोच हमेशा नकारात्मक, अहंकारयुक्त, घृणायुक्त, क्रोधयुक्त रहती है, जिसका मन ईर्ष्या, द्वेष और घृणा से भरा है; जिसका मन काम, क्रोध और विलास की ओर भागता है, वह व्यक्ति क्या कभी सुखी रह सकता है?

व्यक्ति इनके पीछे भागते हुए भी सुख और शांति की कामना करता है! कोयले को अपने शरीर पर रगड़ते हो, कोयला रगड़ने से शरीर काला होता है, और अपने शरीर को काला होते देख कहते हो, काश! मैं स्वच्छ रहता। यह क्यों कहते हो कि काश! मैं स्वच्छ रहता। अगर काला नहीं होना है तो कोयला हाथ से फेंको। अपने शरीर पर मत रगड़ो। अगर तुमको आध्यात्मिक चेतना की प्राप्ति करनी है, तो सांसारिक चेतना का परित्याग करना होगा। सांसारिक चेतना और आध्यात्मिक चेतना एक-दूसरे के पूरक नहीं हैं। अगर ये एक-दूसरे के पूरक होते, तो आज हमारा समाज जाग्रत, संवेदनशील, संयत, रचनात्मक और सुसंस्कृत होता।

सकारात्मक संस्कृति

समाज आप लोगों से बनता है। समाज को सुसंस्कृत कौन करता है? व्यक्ति करता है। अपने जीवन को देखो, आप में कौन-सी संस्कृति है? *सम्यक् कृति इति संस्कृति:* – यह संस्कृति की परिभाषा है, पर आप लोगों के जीवन में कौन-सी सम्यकता है? केवल हठयोग या राजयोग करने से जीवन में सम्यकता नहीं आती। जीवन में सम्यकता तब आती है जब मनुष्य अपने जीवन में गुणात्मक और रचनात्मक परिवर्तन लाता है, संकीर्ण अवस्थाओं से अपने आप को मुक्त करता है। भारतीय आध्यात्मिक परम्परा की यही शिक्षा है।

आपसे हमने प्रश्न किया है, 'आपको जो आदर्श सामने दिखायी देता है, क्या उसको एक प्रतिशत भी अपना पाए हैं?' अगर नहीं, तो अपनाने का प्रयास कीजिए। उसको अपने जीवन में अवतरित करने का प्रयास कीजिए। उसके अनुसार चलने का, सोचने का और व्यवहार करने का प्रयास कीजिए।

बौद्धिक-भावनात्मक कठोरता से कुछ प्राप्त नहीं होता है। बौद्धिक-भावनात्मक कठोरता तभी आती है, जब मनुष्य के भीतर अहंकार रहता है। अहंकार के कारण वह सभी से झगड़ा करने को तैयार रहता है। अपने को ही सही मानता है, बाकी सब को गलत मानता है। अगर कोई व्यक्ति उसको कुछ कहे तो क्रोधित हो जाता है, तुम कौन होते हो मेरे को बोलने वाले! छोटे-बड़े का आभास होने लगता है। उत्तम-अनुत्तम का ज्ञान बतलाने लगता है। यह सब उचित नहीं है। यह सब संसार में रत मन की क्रीड़ा है। जो मन अध्यात्म में रत होता है, वह इस प्रकार की क्रीड़ा नहीं करता, बल्कि निरपेक्ष भाव से सभी का द्रष्टा बनकर रहता है।

आज यह विचार करो कि मैं अपने जीवन में किस प्रकार गुणात्मक परिवर्तन लाकर सुख, शान्ति और आनन्द प्राप्त कर सकता हूँ। आपके यहाँ

आने का एक प्रयोजन है – गुरु के आदर्श को अपने जीवन में उतारने का प्रयास करना। गुरु के आदर्श और चिन्तन को जीवन में उतारने के लिए आज हम संकल्पबद्ध हो जाएँ। जो ऐसा कर पाता है, वह अपने जीवन में पाता भी है। और जो नहीं कर पाता, वह दिन-रात रोता रहता है, दूसरों को गाली देता रहता है।

व्यक्ति का यह स्वभाव होता है कि वह अपने आपको शरीर से जोड़े रखता है, शरीर के अतिरिक्त कुछ देखना नहीं चाहता, और जानना भी नहीं चाहता। अगर भगवान भी आपको कहें, 'बेटा, मैं तुमको मोक्ष देने के लिए तैयार हूँ, चलो', तो आप कहोगे, 'कुछ साल रुक जाइए, अभी मेरे बेटे की शादी होने वाली है', 'अभी मेरे को अपना काम पूरा करना है।' यह सामान्य सामाजिक मानसिकता है, क्योंकि व्यक्ति इस शरीर के अतिरिक्त किसी अन्य तत्त्व को पहचानता नहीं है। लेकिन हमारे मनीषियों ने कहा है कि शरीर शाश्वत नहीं, क्षणभंगुर है। जाने दो इसको। पुराना कपड़ा फेंक दो। गीता में पढ़ते हो – *वासांसि जीर्णानि यथा विहाय*। पढ़ने को तो सब पढ़ते हैं, लेकिन समझता कौन है?

हम लोगों को अपने जीवन में उत्थान के लिए निश्चित रूप से एक चिन्तन, आदर्श और मर्यादा को अपनाना पड़ेगा। जब तक हम एक चिन्तन, आदर्श और मर्यादा को नहीं अपनाते, उस मार्ग पर नहीं चलते, उसको अपने आचार-विचार में व्यक्त नहीं करते, तब तक हम कैटरपिलर ही रहेंगे, तितली में परिवर्तित नहीं होंगे। तितली का मूल रूप कैटरपिलर है। वह जमीन पर चलता है, रेंगता है। लेकिन एक दिन आता है जब वह जमीन पर चलना ही भूल जाता है और तितली के रूप में आसमान की ऊँचाइयों को छूने लगता है। यही है मनुष्य की यात्रा – कैटरपिलर से तितली बनना। लेकिन हम लोग तितली की बजाय अपने आप को और बड़ा कैटरपिलर बनाने का प्रयास करते हैं, ताकि खूब सारे हाथ-पैर हो जाएँ, खूब मोटे-ताजे हो जाएँ, सब चीजें हमारी पकड़ में आ जाएँ!

अब निर्णय आपको लेना है, या तो भारी बनकर संसार में जियो, और अगर इस प्रकार जीते हो तो फिर किसी को दोष मत दो, संसार को बुरा मत मानो, या फिर तितली बन कर स्वच्छंद रूप से आकाश में उड़ो। निर्णय आपका है।

– गुरु भक्ति योग, नवम्बर 2012, गंगा दर्शन

बिहार योग क्लब – सर्बिया

पिछले तीन वर्षों से बिहार योग क्लब हर महीने की 5 तारीख को एक सार्वजनिक कक्षा और हर महीने की 6 तारीख को योग निद्रा और ध्यान के सत्र का आयोजन करते आ रहा है। यह गतिविधि जारी है. इसमें श्री स्वामी सत्यानंद जी की भक्ति योग सागर शृंखला का पठन भी शामिल है। स्वामी ओमज्ञानम् और स्वामी मुद्ररूप सत्रों का संचालन करते हैं जिसमें विविध पृष्ठभूमि के 20 से 50 लोग भाग लेते हैं।

साप्ताहिक सत्यानंद योग

- प्रत्येक सोमवार को सत्यानंद योग निद्रा और ध्यान पर केन्द्रित एक निःशुल्क कक्षा दी जाती है
- बेलग्रेड में महिलाओं के 'सुरक्षित गृहों' के लिए योग कक्षा। सर्बिया में महिलाओं के प्रति बहुत अधिक घरेलू हिंसा होती है और सालाना कई मौतें भी होती हैं। इन सुरक्षित घरों का स्थान बदलते रहता है और गुप्त रखा जाता है, इसलिए कक्षाएँ ऑनलाइन होती हैं।
- बेलग्रेड के एक प्राथमिक विद्यालय में जिप्सी मूल के अभावग्रस्त बच्चों के लिए कक्षा
- बेलग्रेड में स्तन कैंसर का इलाज करा रही महिलाओं के लिए स्वास्थ्य-वर्धक कक्षा

सत्यस्य सत्यम्

दिनकर की स्वर्ण किरण
गंगा की चल जलकण
तुहिन राशि की शीतलता
पुष्प राशि की नव कलिका
नभस्वान की मृदुल हिलोर
मेघदूत का रव घनघोर
मेघराग की चपला चंचल
सरितापति की वीचि तरल
मैं हूँ 'सत्यस्य सत्यम्'

– योग-वेदान्त के अक्टूबर 1954 अंक से साभार उद्धृत

कज़ाकिस्तान योग अकादमी

मार्च

- बुजुर्गों के लिए भोजन और आवश्यक सामग्री का नियमित दान।

अप्रैल

- 25 प्रतिभागियों के साथ योग के बुनियादी सिद्धांतों पर एक नियमित सत्र आयोजित किया गया।
- योग चक्र 2, 4, 6 और 8 पुस्तकों पर आधारित 'क्षण-प्रतिक्षण योग' नामक लघु सत्र संचालित किया गया।

मई

- षट्कर्म पर एक सत्र आयोजित किया गया और अंतरराष्ट्रीय योग दिवस की तैयारी शुरू हुई, जिसमें योग कैप्सूल पर एक व्याख्यान शामिल था। साथ ही 'क्षण-प्रतिक्षण योग' पर 30 दिवसीय ऑनलाइन मैराथॉन की शुरुआत भी हुई, जिसमें पूरे कज़ाकिस्तान और रूस के लोगों ने भाग लिया और अपने अभ्यास पर दैनिक प्रतिवेदन भेजे। इसके अतिरिक्त यौगिक पर्यावरण के अन्तर्गत 'कचरे का प्रबंधन' विषय पर एक व्याख्यान आयोजित हुआ जिसने लोगों में बहुत रुचि जगायी।

जून

- अंतरराष्ट्रीय योग दिवस की पूर्व संध्या पर प्राकृतिक वातावरण में एक प्रेरणादायक कीर्तन कार्यक्रम आयोजित किया गया। कीर्तन के बाद प्रसाद वितरित किया गया। 30 से अधिक लोगों ने कार्यक्रम में भाग लिया।

- काइज़िल केंट रिज़र्व क्षेत्र के बौद्ध मंदिर तक की वार्षिक यात्रा आयोजित की गई। वहाँ योग कैप्सूल कार्यक्रम आयोजित किया गया जिसमें 40 लोगों ने भाग लिया।

जुलाई

- स्वामी अखिलेशानंद ने किर्गिस्तान में एक बड़ी रिट्रीट का आयोजन किया। सेमिनार का विषय था 'लक्ष्य के बारे में जागरूकता रखते हुए मन का नियंत्रण'। प्रतिभागियों ने पाँच दिनों तक आश्रम जीवनशैली अपनायी। दैनिक कार्यक्रम में हठ योग कक्षा, कर्म योग, सैद्धांतिक चर्चा और कीर्तन शामिल थे। सभी प्रतिभागी अपने दैनिक जीवन में अधिक सजगता लाने और योगाभ्यासों को शामिल करने के लिए प्रेरित हुए।

सितम्बर

- स्वामी अखिलेशानंद ने यौगिक जीवनशैली के मौलिक सिद्धांतों और संन्यास की परंपराओं पर एक सत्र आयोजित किया।

अक्टूबर

- कज़ाकिस्तान योग अकादमी के विद्यार्थियों द्वारा अंतरराष्ट्रीय वयोवृद्ध दिवस के अवसर पर स्थानीय धर्मशाला को दान सामग्री प्रदान की गई।

पूरे वर्ष भर

- हमने पूरे वर्ष कई योग निद्रा सत्र तथा नियमित गर्भावस्था, शिशु और बाल योग सत्र चलाए हैं। वैदिक भोजन पकाने पर सत्र दो बार आयोजित किया गया जिसमें हमने लोगों को स्वस्थ, स्वादिष्ट भोजन बनाना सिखाया।
- हम अपने सभी सत्रों के विद्यार्थियों को शामिल करते हुए शहर को हरा-भरा रखने और पेड़-पौधे लगाने में सक्रिय भूमिका निभाते हैं।

दान सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण सूचना

आश्रम के लिए दान राशि केवल निम्नलिखित श्रेणियों के अन्तर्गत स्वीकार की जाएगी –

1. **सामान्य दान**
   जो बिहार स्कूल ऑफ योग, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट अथवा योग रिसर्च फाउण्डेशन को दिया जा सकता है और जिसका उपयोग यौगिक गतिविधियों के विकास एवं संवर्द्धन के लिए किया जाएगा।

2. **मूलधन निधि के लिए दान**
   बिहार स्कूल ऑफ योग, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट अथवा योग रिसर्च फाउण्डेशन की मूलधन निधि के लिए। **मूलधन निधि** से प्राप्त ब्याज राशि का उपयोग संस्था/न्यास की सभी गतिविधियों के लिए किया जाएगा।

3. **सी.एस.आर. दान**
   जिसका उपयोग सी.एस.आर. गतिविधियों के लिए किया जाएगा।

इसलिए भक्तों से निवेदन है कि वे केवल उपर्युक्त श्रेणियों के अन्तर्गत अपनी दान राशि भेजें।

बिहार स्कूल ऑफ योग को दान 'SB Collect Online Donation Facility' के माध्यम से निम्नलिखित वेबसाइट द्वारा सीधे दिया जा सकता है – **https://www.onlinesbi.sbi/sbicollect/icollecthome.htm?corpID=2277965**

आप चेक, डी.डी. अथवा ई.एम.ओ. द्वारा भी दान दे सकते हैं जो **बिहार स्कूल ऑफ योग, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट** या **योग रिसर्च फाउण्डेशन** के नाम से हो और मुंगेर में देय हो।

दान राशि के साथ एक पत्र संलग्न रहे जिसमें आपके दान का प्रयोजन, डाक पता, फोन नम्बर, ई-मेल और PAN नम्बर स्पष्ट हों।

योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट

यौगिक जीवन

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

पृष्ठ 74, ISBN: 978-93-81620-69-4

अगस्त 2011 में गंगा दर्शन विश्व योगपीठ में स्वामीजी द्वारा दिये गये योगदृष्टि सत्संगों का विषय दैनिक जीवन में योग का समावेश था। स्वामीजी ने मनुष्य जीवन में योग की भूमिका और प्रयोजन पर प्रकाश डालते हुए समझाया कि शरीर, मन और आत्मा के समन्वित विकास के लिए विभिन्न योग प्रणालियों को जीवन में किस प्रकार संयोजित किया जा सकता है।

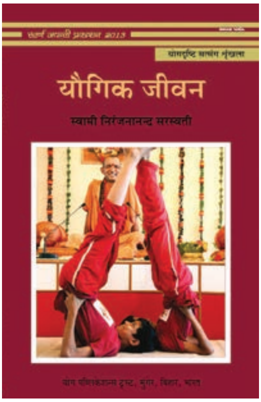

उपलब्ध

पुस्तकों की मूल्य सूची एवं क्रयादेश प्रपत्र प्राप्त करने के लिए सम्पर्क करें –
योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, गरुड विष्णु, पी.ओ. गंगा दर्शन, फोर्ट, मुंगेर, बिहार 811201
दूरभाष : 9162783904, 9835892831

जवाब के लिए अपना पता लिखा, डाकटिकट लगा लिफाफा भेजें, अन्यथा आपके आवेदन पर विचार नहीं किया जाएगा

वेबसाइट और एप्प

www.biharyoga.net

बिहार योग पद्धति की मुख्य वेबसाइट पर बिहार योग, बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट तथा योग शोध संस्थान संबंधी जानकारियाँ उपलब्ध हैं।

सत्यम् योग प्रसाद

बिहार योग परम्परा के समस्त ऑडियो, वीडियो तथा पुस्तक प्रकाशन प्रसाद रूप में *satyamyogaprasad.net* वेबसाइट पर तथा *Android* एवं *iOS* उपकरणों पर एप्प के रूप में प्रस्तुत हैं।

योगा एवं योगविद्या ऑनलाइन

www.biharyoga.net/bihar-school-of-yoga/yoga-magazines/
www.biharyoga.net/bihar-school-of-yoga/yogavidya/

योगा एवं योगविद्या पत्रिकाएँ *Android* एवं *iOS* उपकरणों पर एप्प के रूप में भी उपलब्ध हैं।

अन्य एप्प (Android एवं iOS उपकरणों के लिए) एवं कार्यक्रम

- योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट की लोकप्रिय पुस्तक, ए.पी.एम.बी. अब सुविधाजनक एप्प के रूप में उपलब्ध है
- *Bihar Yoga* एप्प साधकों के लिए प्राचीन और नवीन यौगिक ज्ञान आधुनिक ढंग से पहुँचाता है
- *For Frontline Heroes* एप्प कोरोनावायरस के विरुद्ध अभियान में संघर्षरत कार्यकर्ताओं के लिए सरल योग अभ्यास प्रस्तुत करता है जो महामारी से उत्पन्न तनाव को सम्हालने में सहायक हैं
- स्वस्थ जीवन हेतु *biharyoga.net* तथा *satyamyogaprasad.net* पर *यौगिक जीवनशैली साधना* का कार्यक्रम उपलब्ध है

• Registered with the Registrar of Newspapers, India
Under No. BIHHIN/2002/6306

issn 0972-5725

योगपीठ कार्यक्रम एवं योग विद्या प्रशिक्षण 2024

बिहार योग विद्यालय योगविद्या प्रशिक्षण

फरवरी 11–जुलाई 11	*योग चक्र अनुभव*
जुलाई 2022–जुलाई 2024	*आश्रम जीवन प्रशिक्षण*
अप्रैल 1–7	*प्रत्याहार एवं धारणा प्रशिक्षण*
अप्रैल 10–16	*प्राणायाम – स्वस्थ जीवन के लिए श्वसन प्रशिक्षण*
जुलाई 18–जनवरी 18 2025	*योग चक्र अनुभव*
सितम्बर 22–30	*हठ योग एवं कर्म योग प्रशिक्षण*
सितम्बर 24–30	*हठ योग यात्रा 5*
अक्टूबर 3–12	*राज योग एवं भक्ति योग प्रशिक्षण*
अक्टूबर 6–12	*राज योग यात्रा 5*
अक्टूबर 17–30	*प्रगतिशील योग विद्या प्रशिक्षण*
नवम्बर 3–10	*क्रिया योग एवं ज्ञान योग प्रशिक्षण*

बिहार योग भारती योगविद्या प्रशिक्षण

अगस्त 7–अक्टूबर 7	*द्विमासिक यौगिक अध्ययन (हिन्दी)*

कार्यक्रम

नवम्बर 17–23	*मुंगेर योग संगोष्ठी*

मासिक कार्यक्रम

प्रत्येक शनिवार	*महामृत्युंजय हवन*
प्रत्येक एकादशी	*भगवद् गीता पाठ*
प्रत्येक पूर्णिमा	*सुन्दरकाण्ड पाठ*
प्रत्येक 4, 5 एवं 6 तारीख	*गुरु भक्ति योग*
प्रत्येक 12 तारीख	*अखण्ड रामचरितमानस पाठ*